शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 6 अंक : 10 1 मई 2014

(वैशाख-ज्येष्ठ, विक्रम संवत् 2071)

संरक्षक

मुकुन्द कुलकर्णी

प्रो.के.नरहरि

❖

परामर्श

डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल

प्रो. जगदीश प्रसाद सिंघल

❖

सम्पादक

प्रो. सन्तोष पाण्डेय

❖

सम्पादक मण्डल

विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी

भरत शर्मा

❖

प्रबन्ध सम्पादक

महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक

बजरंग प्रसाद मजेजी

❖

प्रेषण प्रभारी

बसन्त जिन्दल 9414716585

प्रकाशकीय कार्यालयः
82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राज.) 302001
दूरभाष: 9414040403,9782873467

दिल्ली ब्यूरो कार्यालय
शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053
दूरभाष: 011-22914799

E-mail:
shaikshikmanthan@gmail.com
Visit us at :
www.shaikshikmanthan.com

एक प्रति 15/-
वार्षिक शुल्क 150/-
आजीवन (दस वर्ष) 1200/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक
में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल
का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

शैक्षिक मूल्यांकन : नौ दिन चले .... - विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी

निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा बाल अधिकार अधिनियम 2009 के नियम 30 में प्रारम्भिक शिक्षा पूर्ण होने तक बालक को बोर्ड परीक्षा से मुक्त करने व विद्यालय द्वारा ही शिक्षा पूर्ण होने का प्रमाण पत्र देने की बात कही गई है। अधिनियम 29, बच्चे में निहित मेधा, शारीरिक क्षमता का सम्पूर्ण विकास बिना भय के करने के निर्देश दिए गए हैं। केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने कक्षा 10 की बोर्ड परीक्षा को वैकल्पिक करने के साथ ही व्यापक एवं सतत् मूल्यांकन को लागू कर दिया है। अधिनियम के कारण राज्य सरकारों ने कक्षा आठ तक परीक्षा समाप्त कर व्यापक एवं सतत् मूल्यांकन को बेमन से लागू कर दिया गया है।

10

अनुक्रम

4.	शिक्षा में निष्पक्ष व उद्देश्यपूर्ण मूल्यांकन	- सन्तोष पाण्डेय
6.	शिक्षा और मूल्यांकन	- मा. गो. वैद्य
8.	भारतीय शिक्षा में मूल्यांकन-पद्धति	- सीताराम व्यास
14.	परीक्षा, मूल्यांकन और चुनौतियां	- बजरंगी सिंह
16.	सतत् एवं समग्र मूल्यांकन का औचित्य	- डॉ. रेखा भट्ट
18.	क्या कारगर सिद्ध होगी नवीन परीक्षा प्रणाली ?	- अशोक माथुर
20.	Why We Need Examination Reforms?	- Himanshu Shekhar
24.	Copy Capital: Spotlight back on organised ...	- Hamza Khan
27.	Reinventing MATHS	- Aaditi Isaac
28.	कागजों तक सिमटा शिक्षा का अधिकार	- जगमोहन सिंह राजपूत
30.	Which party will give India an edge-ucation?	- Subodh Varma
32.	नैतिक मूल्य मनुष्यता की पहचान है	- सोनी वार्ष्णेय
36.	Tried, tested and failed	- Sundar Sarukkai
38.	भारतीय विज्ञान : कल आज और कल	- डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल
41.	गतिविधि	

Evaluation System for Self Improvement

- Dr. A. K. Gupta

The education system needs to focus on the evaluation system that can enhance self improvement rather than merely judging on scales decided by traditional ways. Many experiments have been conducted to find an appropriate system for evaluation. Pattern of examination systems is again debatable issue. Some school of thought may prefer to opt for subjective type than objective type of questions, Conducting viva voce exam in certain subjects may be helpful but in others it may be practical examination which is of value oriented. Unit wise subdivision of syllabus or having choice of questions also affect preparations for the exams.

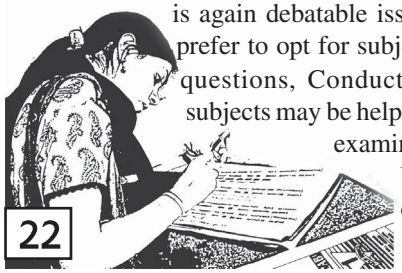

22

शिक्षा में निष्पक्ष व उद्देश्यपूर्ण मूल्यांकन

❑ **सन्तोष पाण्डेय**

समाज की भौतिक व आध्यात्मिक प्रगति में शिक्षा के योग से सभी परिचित हैं। शिक्षा ही मनुष्य को सामाजिक व नैतिक दृष्टि से परिपूर्ण कर वर्तमान की चुनौतियों का सामना करने व उनके उपयुक्त हल निकालने के योग्य बनाती है। स्वामी विवेकानन्द के शब्दों में व्यक्ति में अन्तर्निहित क्षमताओं को प्रकट कर पूर्णता की ओर ले जाना ही शिक्षा है। इस दृष्टि से यह आवश्यक हो जाता है कि शिक्षण में किन-किन बातों को शामिल किया जाय। शिक्षा को पाठ्यचर्या का निर्धारण इस उद्देश्य प्राप्ति का आवश्यक एवं महत्वपूर्ण अंश है। सामाजिक, नैतिक ये आध्यात्मिक गुणों से परिपूर्ण, व्यक्ति ही सच्चे शिक्षक की भूमिका निभाता है। शिक्षा के ये तो महत्वपूर्ण व अभिन्न अंग है ही, साथ ही यह भी सुनिश्चित करना आवश्यक है कि शिक्षा गृहीता अर्थात् छात्र ने भी किस सीमा तक उसे ग्रहण किया है। शिक्षा के कन्टैन्ट, शिक्षण विधि, शिक्षा का वातावरण के समान ही निष्पक्ष एवं उद्देश्यपूर्ण मूल्यांकन भी शिक्षा व्यवस्था का महत्वपूर्ण अंग है। वर्तमान में शिक्षा के अनेक उद्देश्य हैं। इनमें विश्व में उपलब्ध ज्ञान के अथाह सागर को जन-जन तक पहुँचाकर मूल्यों के वाहक सुयोग्य नागरिक तैयार करना, भारत जैसी विशाल जनसंख्या वाले समाज में रोजगार के सृजनकर्ता व रोजगार की आवश्यकताओं के अनुरूप मानवीय संसाधन प्रदान करना आदि महत्वपूर्ण उद्देश्य हैं। भारत जैसे गरीब देश में तो पिछड़े, गरीब वंचित वर्ग चाहे वह शहरी हो या ग्रामीण को प्राथमिक शिक्षा प्रदान करना ही अपने आप में एक बड़ा उद्देश्य है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये जहाँ उपयुक्त शिक्षण व्यवस्था व वातावरण, भौतिक सुविधायें व प्रतिबद्ध शिक्षकगण तथा क्या पढ़ाया जाय का निर्धारण अपेक्षित है, यह भी अति आवश्यक है कि शिक्षा गृहीता छात्र ने क्या और कितना ग्रहण किया का निष्पक्ष व उद्देश्यपूर्ण मूल्यांकन हो। तब ही शिक्षा प्रणाली उद्देश्यों की प्राप्ति में सफल कही जा सकती है।

भारत में प्राचीनकाल से ही शिक्षा में शिक्षण विषय वस्तु के साथ-साथ उसके मूल्यांकन की अभिन्न व्यवस्था रही है। गुरुकुल में गुरु न केवल सैद्धान्तिक ज्ञान ही देते थे, वरन् व्यावहारिक ज्ञान भी प्रदान करते थे। गुरु ही छात्र का सतत व समग्र मूल्यांकन कर शिक्षा पूरी होने की घोषणा करता था। मैकाले की शिक्षा पद्धति प्रचलित होने पर शिक्षा में मूल्यांकन की व्यवस्था में परिवर्तन आया। गुरुकुल के सतत व समग्र मूल्यांकन का स्थान, शिक्षण अवधि में दिये गये ज्ञान को छात्र कितना

संपादकीय

याद रख पाया के आधार पर मूल्यांकन होने लगा। समझ विकसित करने का स्थान कितना आत्मसात किया आधारित हो गया। इससे कालान्तर में रटन्त पर आधारित परीक्षा प्रणाली का उदय हुआ। यह आज भी भारतीय शिक्षा प्रणाली का मूलाधार बना हुआ है। परन्तु क्या यह आज के सन्दर्भ में उपयुक्त है। इस पर स्वतंत्रता प्राप्ति से विचार-विमर्श जारी है। समय-समय पर गठित शिक्षा आयोगों, समितियों, मनीषियों, शिक्षाविदों ने प्रश्न पर गंभीर मनन कर उपयुक्त मूल्यांकन व्यवस्था को विकसित करने के प्रयास किये हैं। आज भी निष्पक्ष उद्देश्य पूर्ण एवं व्यक्ति की क्षमताओं को चिह्नित कर पूर्णता प्रदान करने वाली मूल्यांकन व्यवस्था की खोज जारी है। भारतीय शिक्षा व्यवस्था को विभिन्न क्षेत्रों व आधारों पर वर्गीकृत करते हुये मूल्यांकन की रूपरेखा तैयार करना अधिक उपयुक्त होगा।

देश की विशाल जनसंख्या को शिक्षा प्रदान करना एक बहुत बड़ी चुनौती है। छह लाख से अधिक गाँवों में फैली विशाल ग्रामीण, दलित, गरीबी से पीड़ित जनसंख्या को शिक्षा प्रदान करना एक बड़ा कार्य है। शिक्षा के अधिकार, सर्वशिक्षा अभियान पौष्टिक पोषाहार कार्यक्रम के माध्यम से इस लक्ष्य की प्राप्ति का प्रयास हो रहा है। वित्तीय संसाधनों की कमी से उपयुक्त संख्या में शिक्षकों, भौतिक सुविधाओं की व्यवस्था न होने से शिक्षण कार्य बाधित होता है। ऐसे में गुणवत्तापूर्ण शिक्षण प्रदान करना दिवास्वप्न ही है। प्राथमिक स्तर पर किसी भी प्रकार की परीक्षा पर भी रोक है। कक्षा एक से कक्षा आठ तक शिक्षक को ही छात्र का मूल्यांकन कर उसकी कमियों को दूर करना होगा तथा छात्र को माध्यमिक शिक्षा के प्रवेश योग्य बनाना होगा। यहाँ मूल्यांकन एक बड़ी चुनौती है। बच्चों की पढ़ने की क्षमता एवं जोड़ बाकी करने की क्षमता में निरन्तर आ रही कमी से हम सभी सुपरिचित हैं। इनके लिये ऐसे मूल्यांकन जो निष्पक्ष हो, को खोजना एक बड़ी चुनौती है। संभवत: प्राथमिक शिक्षा का वर्तमान में उद्देश्य कुछ भिन्न लगता है, यहाँ बालक की विद्यालय में नियमित हाजरी, मध्याह्न पौष्टिक पोषाहार प्रदान कर भावी श्रमशक्ति की उत्पादकता व शिक्षा के प्रति समझ को विकसित करना एक तात्कालिक आवश्यकता है। इससे प्राथमिक व उच्च प्राथमिक शिक्षा आकर्षक, तनावरहित व परीक्षा रहित रहेगी। परन्तु छात्र में ये सभी गुण तो प्रतिबद्ध व कर्तव्यनिष्ठ शिक्षक द्वारा ही दिये जा सकते हैं। ऐसे शिक्षकों का अभाव इसमें बड़ी बाधा है। इससे क्या देश में माध्यमिक स्तर की शिक्षा के पात्र भावी छात्रों का आधार कमजोर नहीं होगा, इस पर विचार आवश्यक है।

आज देश में शिक्षा के महत्व को जन-जन चाहे गरीब हो या अमीर समझने लगा है। ऐसे में उपर्युक्त प्राथमिक व उच्च प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था से बहुत बड़ा वर्ग संतुष्ट नहीं है। वह अपने बालकों को सर्वश्रेष्ठ शिक्षा उपलब्ध कराना चाहता है, इसके लिये गुणवत्तापूर्ण शिक्षण अति आवश्यक है। शिक्षा में निजी क्षेत्र इसी आवश्यकता की पूर्ति हेतु तेजी से फैला है। परन्तु आठवीं कक्षा तक किसी को भी नहीं रोका जावे की नीति के कारण कमजोर व कुशाग्र छात्र का भेद संभव

नही है। इस समस्या का निदान ढूंढना अपेक्षित है। राजस्थान की सरकार ने कुछ पहल की है जिसके अन्तर्गत आठवीं कक्षा में परीक्षा देने का वैकल्पिक प्रावधान रखा गया है। संभव है कि इससे शिक्षा के प्रति जागरुकता व गुणवत्ता का लक्ष्य प्राप्त हो तथा माध्यमिक शिक्षा को भी योग्य छात्र प्राप्त हो सके।

माध्यमिक व उच्च माध्यमिक शिक्षा वास्तव में छात्र की योग्यता को प्रकट करने, भावी जीवन के लक्ष्यों की रूपरेखा बनाने के साथ-साथ समाज के लिये योग्य सुपात्र तैयार करने में सर्वाधिक भूमिका निभाती है इस स्तर पर ही स्वाध्याय को प्रेरित कर छात्र के संपूर्ण व्यक्तित्व के विकास का आधार बनता है। इस स्तर पर ही छात्र के समस्त गुणों व उसमें अन्तर्निहित प्रतिभा की पहचान संभव हो पाती है। इन सबके लिये छात्र का निरन्तर व समग्र मूल्यांकन अपेक्षित है। इसी सतत व समग्र मूल्यांकन के आधार पर शिक्षक उसकी प्रतिभा को दिशा दे सकता है। परंपरागत परीक्षा आधारित मूल्यांकन व्यवस्था में यह संभव नहीं है। चाहे भले ही यह परीक्षा साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक या वार्षिक आधार पर स्वयं स्कूल द्वारा अथवा बोर्ड द्वारा ही क्यों न ली जा रही हो। परीक्षार्थियों की बढ़ती संख्या व परीक्षा के बढ़ते भार के कारण शिक्षक द्वारा निष्पक्ष मूल्यांकन संभव नहीं है। विकल्प क्या हो? माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर पर परीक्षा के साथ-साथ सतत व समग्र मूल्यांकन ही एकमात्र विकल्प है, जिसके द्वारा छात्र के बौद्धिक स्तर, व्यावहारिक ज्ञान, सह शैक्षणिक गतिविधियों में भाग लेने की क्षमता के साथ-साथ नैतिक मूल्यों एवं अभिरुचियों का मूल्यांकन संभव है। इसकी सफलता के लिये विशेष रूप से प्रशिक्षित एवं प्रतिबद्ध शिक्षकों का निर्धारित संख्या में होना अपेक्षित है। शिक्षक-छात्र अनुपात को पुनर्निर्धारित करना आवश्यक है। परन्तु समाज व सरकार इनके लिये वित्तीय संसाधन जुटाने को तैयार है, एक बड़ा प्रश्न है। सतत व समग्र मूल्यांकन के साथ-साथ अंक आधारित मूल्यांकन के स्थान पर ग्रेड आधारित मूल्यांकन अति आवश्यक है। तब ही शिक्षा तनावरहित, अंकों की बढ़ती भूख व इससे उत्पन्न हताशा व असन्तोष पर अंकुश लगाया जा सकता है।

उच्च माध्यमिक शिक्षा को पूर्ण करने पर ही उच्च शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, चिकित्सा, विधि व प्रोफेशनल शिक्षा के द्वारा खुलते हैं। देश में बड़ी युवा संख्या के अनुरूप सभी के लिये उपर्युक्त प्रकार की शिक्षा व्यवस्था संभव नहीं है। अत: इनमें प्रवेश के लिये विभिन्न आधारों पर मूल्यांकन आवश्यक है। परम्परागत परीक्षा प्रणाली के अन्तर्गत दी गई अंक व्यवस्था भी इसका समाधान नहीं है। राज्यों के अलग -अलग शिक्षा बोर्डों व सी.बी.एस.ई द्वारा प्रदत्त अंक व ग्रेड व्यवस्था में भारी अन्तर मूल्यांकन को गंभीर समस्या बना देता है। इस प्रकार शिक्षा व रोजगार में प्रवेश के लिये योग्यता मापन का एक निष्पक्ष आधार तैयार करना आवश्यक है। देश में आईआईटी प्रवेश परीक्षा व रोजगार में प्रवेश हेतु राज्य लोक सेवा आयोग की कार्यप्रणाली पर प्रश्नचिह्न लगते रहे हैं। इनका समुचित व न्याय संगत निदान आवश्यक है, क्या इन सभी परीक्षाओं के लिये अंकों व ग्रेड पर आधारित व्यवस्था के अतिरिक्त कोई सर्वमान्य व निष्पक्ष व्यवस्था बनायी जा सकती है, पर विचार आवश्यक है।

उच्च शिक्षा का ज्ञान के विस्तार, सृजन शोध व अनुसंधान के बढ़ते महत्व से सभी परिचित है। उच्च शिक्षा में भी मूल्यांकन की समस्या विद्यमान है। देश में जहाँ तक विशिष्ट शिक्षण संस्थानों व केन्द्रीय विश्वविद्यालयों जो कि संसाधनों की समस्या विद्यमान है। देश में जहाँ तक विशिष्ट शिक्षण संस्थानों व केन्द्रीय विश्वविद्यालयों जो कि संसाधनों की समस्या से कम पीड़ित है में स्थिति कुछ सीमा तक संतोषजनक कही जा सकती है, परन्तु विश्व के सर्वोत्कृष्ट सौ में तो क्या दो सौ में भी भारत के किसी भी विश्वविद्यालय का न होना एक चेतावनी देता है, कि आज के प्रतिस्पर्द्धी विश्व में यदि हम अपनी शिक्षण व मूल्यांकन व्यवस्था में सुधार कर गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा प्रदान नहीं कर पाते हैं तो भारत कभी भी बड़ी प्रतिस्पर्द्धी आर्थिक, राजनीतिक व शैक्षिक ताकत नहीं बन सकेगा। इनके लिये बढ़े वित्तीय संसाधन व शैक्षिक सुधार आवश्यक हैं। परंपरागत परीक्षा प्रणाली के स्थान पर सेमेस्टर प्रणाली व ग्रेड व्यवस्था कुछ सीमा तक हल सुझा सकती है। उच्च शिक्षा में गुणवत्ता की समस्या तथा देश में रोजगार की आवश्यकता के अनुरूप सैद्धान्तिक व व्यावहारिक ज्ञान से परिपूर्ण मानवीय संसाधन जुटाने तथा नये ज्ञान के सृजन विस्तार व नये प्रयोग, नये पदार्थ खोजने का कार्य गुणवत्तापूर्ण शिक्षा ही सम्पन्न कर सकती है। समुचित व न्यायसंगत मूल्यांकन व्यवस्था का होना इसकी एक पूर्व शर्त है। देश में उच्च शिक्षा में प्रवेश दर को बढ़ाने की दृष्टि से बड़ी संख्या में राज्य विश्वविद्यालय निजी विश्वविद्यालय, डीम्ड यूनिवर्सिटी, राजकीय निजी महाविद्यालय खुले हैं। उच्च शिक्षा में प्रवेश के बढ़ते दबाव ने शिक्षा को एक अति आकर्षक उद्योग के रूप में बदल दिया है? राज्य के विश्वविद्यालय स्तरीय शिक्षा प्रदान करने के स्थान पर परीक्षा लेकर ज्ञान रहित डिग्री प्रदान करने वाली संस्थायें बनकर रह गये हैं। अंक आधारित परीक्षा प्रणाली ने कोचिंग, पासबुक्स व गाइडस व संगठित नकल के व्यवसाय को पनपाया है? प्रतीत होता है कि ज्ञान प्राप्ति के स्थान पर ज्ञान रहित कागजी उपाधि प्राप्त करना ही लक्ष्य हो गया है जो व्यवसाय के लिये पासपोर्ट है। परीक्षार्थियों की भारी संख्या व योग्य व अनुभवी परीक्षकों के अभाव ने मूल्यांकन के स्तर को बहुत गिराया है। उत्तर पढ़े बिना ही अंक प्रदान करना बड़ी व्याधि बन गयी है। परीक्षकों का भी यह पक्ष संभावित है कि शीघ्र व समय पर परीक्षा परिणाम जारी करने की बध्यता के चलते भारी दबाव में परीक्षकों को बिना पढे ही अंक देने को विवश होना पड़ता हो, परन्तु क्या यह पूरी पीढ़ी के साथ अन्याय नहीं है? इन सभी व्याधियों का निदान तब ही संभव है, जब समाज जिसमें राज्य शासन निर्णायक भूमिका में है। शिक्षा की पठन सामग्री भौतिक सुविधाओं, शिक्षक व्यवस्था के साथ-साथ मूल्यांकन की निष्पक्ष व उद्देश्यपूर्ण व्यवस्था को विकसित करने में भौतिक व वित्तीय संसाधन जुटायें। ❑

शिक्षा और मूल्यांकन

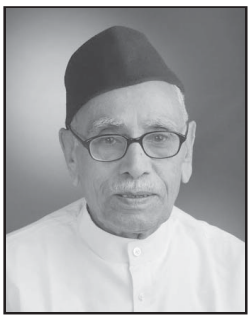

❑ मा. गो. वैद्य

शिक्षा क्षेत्र के बारे में मेरे विचार कुछ अजीब से लगने वाले हैं। अपनी सरकार ने शिक्षा पाने का मौलिक अधिकार मान्य किया है। वह ठीक ही है। किन्तु मेरा मत यह है कि शिक्षा देने का भी मौलिक अधिकार होना चाहिये। यह आवश्यक नहीं कि विशिष्ट प्रणाली से ही शिक्षा प्रदान की जानी चाहिये। सरकार द्वारा प्रणीत विद्यालय अवश्य होने चाहिये। वैसे ही जो निजी स्वामित्व में हैं, वैसे भी विद्यालय होने चाहिये। आज इन दो प्रकारकों के ही विद्यालय हैं। मेरा मत है कि किसी को भी विद्या देने का अधिकार होना चाहिये। समाज में एक नया धनिक वर्ग निर्माण हुआ है। उनमें से अनेक, निजी ट्यूशन क्लासेस में जाकर आज भी शिक्षा ग्रहण करते हैं। किन्तु परीक्षा के लिये उनको किसी ना किसी शासनमान्य विद्यालय में प्रवेश लेना ही पड़ता है। अन्यथा वह परीक्षा दे नहीं सकता। मुझे इस द्राविडी प्राणायाम की आवश्यकता मान्य नहीं है। जिस ट्यूशन क्लास में एक या दो विषय पढ़ने के लिये वह छात्र जाता है, वहाँ से भी परीक्षा देने का अधिकार उसको होना चाहिये। मैं केवल धनी वर्ग की बात नहीं करता हूँ। कोई सेवाभावी कार्यकर्ता अपने घर में अथवा किसी मंदिर का व्यवस्थापन मंदिर के परिसर में शिक्षा का प्रबंध करता है, तो उसको भी अपने छात्रों को पढाने की और परीक्षा में उसे प्रवेश देने की सुविधा मिलनी चाहिये। विद्यालय की योग्यता और वैधता विद्यालय की इमारत की भव्यता पर निर्भर होने की आवश्यकता नहीं है।

हाँ, सब की परीक्षा लेने की पद्धति एवं स्तर समान होना चाहिये। मैं परीक्षा पद्धति का समर्थक हूँ। परीक्षा के द्वारा ही छात्रों की पढाई का मूल्यांकन होना चाहिये। मेरे विचार से परीक्षा लेने के कुछ स्तर होने चाहिये। जैसे–

1. प्राथमिक – आज जिसको चौथे कक्ष की परीक्षा कहते हैं, यानी छात्र की चार वर्षों तक पढाई होने के बाद जो परीक्षा होती है, वह होनी ही चाहिये। तहसील के स्तर पर इस का प्रबंधन हो। इस हेतु एक परीक्षा मंडल होना चाहिये, जिसके सदस्य सेवानिवृत्त प्राथमिक शिक्षकों में से होने चाहिये। साधारणत: ग्यारह सदस्यों का यह मंडल हो। छात्रों को इस परीक्षा हेतु आयु की कोई सीमा नहीं होनी चाहिये। छ: साल का बालक भी यह परीक्षा दे सकता है। श्रीमद आद्य शंकराचार्य के बारे में एक किस्सा है। श्री रामकृष्ण परमहंस को

सरकार द्वारा प्रणीत विद्यालय अवश्य होने चाहिये। वैसे ही जो निजी स्वामित्व में हैं, वैसे भी विद्यालय होने चाहिये। आज इन दो प्रकारकों के ही विद्यालय हैं। मेरा मत है कि किसी को भी विद्या देने का अधिकार होना चाहिये। समाज में एक नया धनिक वर्ग निर्माण हुआ है। उनमें से अनेक, निजी ट्यूशन क्लासेस में जाकर आज भी शिक्षा ग्रहण करते हैं। किन्तु परीक्षा के लिये उनको किसी ना किसी शासनमान्य विद्यालय में प्रवेश लेना ही पड़ता है। अन्यथा वह परीक्षा दे नहीं सकता। मुझे इस द्राविड़ी प्राणायाम की आवश्यकता मान्य नहीं है। जिस ट्यूशन क्लास में एक या दो विषय पढ़ने के लिये वह छात्र जाता है, वहाँ से भी परीक्षा देने का अधिकार उसको होना चाहिये।

उनके किसी शिष्य ने पूछा था कि श्री आद्य शंकराचार्य को आठ वर्ष की आयु में सारे वेद कैसे याद हुये। क्योंकि एक वेदसंहिता को याद करने के लिये 12 वर्षों तक पाठ करना पडता है। श्री रामकृष्ण ने उत्तर दिया कि सम्भव है कि श्री शंकराचार्य की बुद्धि बचपन में उतनी प्रबल नहीं थी। अत: वेदसंहिता याद करने हेतु उन्हें आठ साल लगे। मतलब है किसी को पूर्वजन्म के संचित के कारण जन्मत: ही ज्ञान हो सकता है। आधुनिक काल की यह वास्तविकता है कि श्री रामनुजन प्राथमिक कक्षा का विद्यार्थी होने के समय से ही बी. ए. उपाधि के समकक्ष गणित के प्रश्नों का उत्तर दे सकता था। लंदन की रॉयल सोसायटी ने उस की विद्वत्ता को मान्यता देते हुये उसे अपना 'फेलो' बनाया था। सारांश यह है कि किसी भी परीक्षा के लिये आयु की सीमा नहीं होनी चाहिये।

यह जो प्राथमिक शिक्षा की परीक्षा रहेगी उस के दो भाग रहेंगे। एक लिखित परीक्षा का और दूसरा मौखिक परीक्षा का। और उत्तीर्ण होने के लिये कम से कम 50 प्रतिशत अंक प्राप्त करना अनिवार्य रहेगा। और परीक्षा के विषय होंगे गणित, भाषा एवं नागरिक व्यवहार।

2. पूर्व माध्यमिक परीक्षा - सामान्यत: आज के सातवीं कक्षा की शिक्षा पाने वालों के लिये यह परीक्षा रहेगी। इस की व्यवस्था जिला स्तर पर रहेगी। इस हेतु एक नया परीक्षा मंडल रहेगा। उसके भी सदस्य सेवानिवृत्त शिक्षक ही रहेंगे। इस के परीक्षा के विषय गणित, भाषा, प्राथमिक विज्ञान और नागरिक व्यवहार रहेंगे। यह परीक्षा भी लिखित, तथा भाषा के बारे में मौखिक भी रहेगी। यहाँ भी उत्तीर्णता के लिये कम से कम पचास प्रतिशत अंकों का नियम रहेगा।

3. माध्यमिक परीक्षा - आज की दसवीं कक्षा के अन्त में जो परीक्षा होती है, उसी स्तर की यह परीक्षा होगी। इस में एक

विदेशी भाषा का प्राथमिक ज्ञान आवश्यक रहेगा। वह भाषा अंग्रेजी ही होनी चाहिये यह अनिवार्यता नहीं रहेगी। इस परीक्षा का प्रबंधन विभाग स्तर पर होगा। यह केवल लिखित परीक्षा होगी। इस परीक्षा हेतु भी वयोमर्यादा नहीं रहेगी। साथ ही संस्कृत भाषा का भी प्राथमिक ज्ञान आवश्यक रहेगा।

4. माध्यमिकोत्तर परीक्षा - आज 12 वी कक्षा के अन्त में जो परीक्षा होती है, उस का स्तर यहाँ अपेक्षित है। माध्यमिक परीक्षा के सदृश ही विषय रहेंगे। और एक विदेशी भाषा, तथा संस्कृत ये विषय अनिवार्य रहेंगे। उत्तीर्णता के लिये यहाँ भी 50 प्रतिशत अंकों की अपेक्षा रहेगी।

5. स्नातक स्तर परीक्षा - माध्यमिकोत्तर परीक्षा के बाद ज्ञान-विज्ञान के विषयों के साथ ही व्यावसायिक शिक्षा का पर्याय सभी को उपलब्ध होगा। आज के विश्वविद्यालय इस द्विविध शिक्षा के विषय और स्तर निर्धारित करेंगे। विज्ञान विधा की परीक्षा में प्रायोगिक (प्रेक्टिकल) हिस्सा रहेगा। लिखित परीक्षा के समय परीक्षार्थियों को अपने पाठ्यपुस्तक (टेक्स्ट बुक) साथ लाने की अनुमति रहेगी। शर्त यह रहेगी कि उस के पन्नों पर कोई टीका-टिप्पणी- हस्तलिखित हो या मुद्रित- नहीं होनी चाहिये। माध्यमिकोत्तर परीक्षा के तीन वर्षों के बाद यह परीक्षा हो। विश्वविद्यालय, स्तर के अनुसार उपाधि देने की व्यवस्था करेगा। ज्ञान-विज्ञान के विषयों में से अपने रुचि के अनुसार विषय चुनने की सुविधा होगी और साधारणत: ऐसे विषय तीन होंगे। यहाँ पर भी उत्तीर्णता की कसौटी 50 प्रतिशत अंक प्राप्त करना यही होगी।

6. स्नातकोत्तर परीक्षा - इस के लिये छात्र कोई भी एक विषय चुन सकता है। उसकी परीक्षा के दो स्तर होंगे। 1) लिखित परीक्षा और 2) प्रबंध (थिसिस) परीक्षा। छात्र थिसिस के लिये अपना विषय चुन सकता है।

तात्पर्य यह है कि परीक्षा यानी मूल्यांकन आवश्यक है। कम से कम 50 प्रतिशत यह उत्तीर्ण होने की कसौटी होनी चाहिये। छात्रों को अपना माध्यम (मीडियम) चुनने की स्वतंत्रता हो। कहीं पर भी आयु की मर्यादा न हो। किन्तु पूर्व के स्तर की परीक्षा उत्तीर्ण होना, उत्तर के स्तर की परीक्षा हेतु अनिवार्य रहेगा। ❑

(लेखक दैनिक-'तरुण भारत' के पूर्व संपादक हैं)

भारतीय शिक्षा में मूल्यांकन-पद्धति

जब हम शिक्षा में मूल्यांकन की चर्चा करते है तो परीक्षा प्रणाली के संचालन में उत्पन्न दूषित बिन्दुओं के निराकरण पर तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता है। परीक्षा के सुचारू संचालन से जुड़े सभी स्तरों पर ईमानदारी सजगता और तत्परता वांछनीय है। इन सभी स्तरों पर सावधानी और सुधार की आवश्यकता है। प्रामाणिकता, ईमानदारी से पूरी चौकसी बरतने पर कोई भी पद्धति सफल हो सकती है। निष्ठा के अभाव में नयी से नयी परीक्षा पद्धति भी असफल सिद्ध होगी। अतः आवश्यकता है पद्धति बदलने की ही नहीं राष्ट्रीय चरित्र सुधारने और जीवन दृष्टि बदलने की है। जीवन मूल्यों के अभाव में मूल्यांकन की कोई भी पद्धति सार्थक सिद्ध नहीं हो सकती।

❑ **सीताराम व्यास**

शिक्षा प्रणाली और मूल्यांकन-पद्धति परस्पर संबधित है। दोनों एक दूसरे के स्वरूप को प्रभावित ही नहीं निर्धारित भी करती हैं। शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन आता है तो मूल्यांकन अथवा परीक्षा की पद्धति में परिवर्तन आना अनिवार्य हैं। इसी प्रकार मूल्यांकन की पद्धति में बदलाव आते ही शिक्षा का स्वरूप उसी के अनुरूप परिवर्तित करना पड़ता है। वर्तमान शिक्षा का ढाँचा प्राचीन शिक्षा से भिन्न होने के कारण ही परीक्षा-पद्धति में भी भारी परविर्तन आ गया है। प्राचीन काल में गुरु कुलीय पद्धति में आचार, विचार और संस्कार पर बल था। अत: वह मनुष्य और समाज के सर्वांगीण विकास की विधियों का ज्ञान कराती थी। जबकि वर्तमान शिक्षा जीविकोपार्जन के उपायों के प्रशिक्षण पर आधारित होने के कारण अपने स्वरूप में बहिर्मुखी और व्यावसायिक है। तदनुरूप, मूल्यांकन भी यान्त्रिक है। छात्र रटकर परीक्षा में केवल पाँच प्रश्नों के उत्तर उत्तर-पुस्तिका में लिखकर उत्तीर्णांक (33 प्रतिशत) से अधिक अंको के बल पर परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाता हैं। इसीलिए लोग वर्तमान शिक्षा को अंकार्थ शिक्षा (Learning for Marks) कहने लगे है। बस यही छात्र का यान्त्रिक मूल्यांकन है। परीक्षा-पद्धति छात्र को विषय की गहराई तक जाने की ओर उन्मुख नहीं करती। छात्र केवल 10-15 महत्त्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तरों को याद करके ही परीक्षा केन्द्र में जाता है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात शिक्षा-नीति और मूल्यांकन -पद्धति पर अनेक आयोग और समितियां गठित की गई। इनके प्रतिवेदनों पर देश भर में चर्चा हुई। डॉ.डी.एस.कोठारी की रिपोर्ट ने शिक्षा की गुणवत्ता तथा मूल्यांकन-पद्धति पर अच्छे सुझाव भी दिये थे। 1968 में डॉ. कोठारी आयोग की रिपोर्ट पर शिक्षा-नीति बनी, पर आज तक सरकार ने क्रियान्वित नहीं की। डा.कोठारी-आयोग की रिपोर्ट पर कार्यवाही होती तो आज अपने देश को भारी संख्या में सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक, गणितज्ञ, इंजीनियर, डाक्टर प्राप्त होते और देश बहुत आगे बढ़ जाता। हम वैश्वीकरण के चक्कर में मूल्यांकन -पद्धति में पश्चिम की नक़ल करते रहे।। यह भी सत्य है कि हमने 15-20 वर्षो में परम्परागत मूल्यांकन पद्धति में कुछ सुधार किया है। यह प्रयास अच्छा रहा है, परन्तु पर्याप्त नहीं माना जा सकता है।

इस दृष्टि से यहाँ कुछ वांछित सुझाव उल्लेखनीय हैं-

1. विद्यार्थी की लिखित और मौखिक परीक्षा में विषय-ज्ञान की गहराई तक जाने की क्षमता का प्रकटीकरण अपेक्षित है। इसके लिए परीक्षक को विषय की समग्रता को ध्यान में रखकर प्रश्न-पत्र बनाना चाहिये। प्रश्न-पत्र में सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को समाहित करने की आवश्यकता है।

2. छात्र का लिखित परीक्षा के साथ-साथ अन्य पाठ्यक्रमेत्तर गतिविधियों-तथा खेल, भाषण-प्रतियोगिता, कविता पाठ, लेखन प्रतियोगिता, सेवा-कार्य तथा अन्य सांस्कृतिक-कार्यक्रम का मूल्यांकन करना।

3. विद्यार्थी का कक्षा में व्यवहार उसकी जिज्ञासावृत्ति, अनुशासन, उपस्थिति, समय-पालन आदि का आंकलन करते रहना। यह पद्धति विद्यार्थी की अन्तर्निहित शक्तियों को विकसित करने में सहायक सिद्ध होगी।

4. विश्वविद्यालयस्तरीय परीक्षा शोधपरक, मौलिक तथा प्रायोगिक विधि पर आधारित होनी चाहिए। प्रत्येक विद्यार्थी अपने विषय से संबधित एक परियोजना (Project) पर कार्य करे। अपने प्राध्यापकों तथा कक्षा के छात्रों के सम्मुख परियोजना (Project) पूर्ण होने पर उसका विवरण प्रस्तुत करे। उसमें प्रश्नोन्तर के माध्यम से परस्पर

चिन्तन, संवाद ओर समीक्षा हो। इस प्रणाली से विद्यार्थियों को उच्चस्तरीय शोध-कार्य की प्रेरणा मिलेगी और उनकी मेधा, मौलिकता, गुणवत्ता का मूल्यांकन होगा।

5. प्रचलित सेमेस्टर सिस्टम का अनुभव अच्छा नहीं आ रहा है। इस सिस्टम ने छात्रों को निरन्तर परीक्षा के तनाव में रहने को विवश कर दिया है। एक सेमेस्टर परीक्षा के पश्चात दूसरे सेमेस्टर परीक्षा सिरपर आ खड़ी रहती है। परीक्षक उत्तर-पुस्तिका को जाँचने में लगा रहता है और पाठ्यक्रम को भी आधा-अधूरा पढ़ा पाता है। यह सिस्टम एक कर्मकाण्ड बन गया है। सेमेस्टर सिस्टम को तत्काल हटा देना चाहिए।

6. मूल्यांकन का प्रमुख साधन परीक्षा-संचालन प्रणाली है। वर्तमान में परीक्षक, पर्यवेक्षक, एवं परीक्षा ब्राँच की कार्य-प्रणाली सन्देह के कठघरे में खड़ी दिखायी देती हैं। परीक्षक पैसे बटोरने के उद्देश्य से काम अपनाते हैं। उत्तर-पुस्तिका को बिना पढ़े ही 40 से 60 अंक देते हैं। कई बार शिक्षण संस्थान के मालिक के दबाव में अयोग्य विद्यार्थी को अधिक अंक देकर उत्तीर्ण कर देते हैं। शिक्षा-संस्थान के मालिकों की मिलीभगत से पर्यवेक्षक परीक्षा में नकल करवाते पकड़े जाते है। परीक्षा ब्रांच में परीक्षा-परिणाम समय पर और सही ढंग से नहीं घोषित किया जाता। उत्तर-पुस्तिकाओं के पुनर्मूल्यांकन में भी रिश्वत तथा धाँधली चलती है। परीक्षा में सही मूल्यांकन न होने के कारण आशा के अनुरूप कई होनहार भावुक विद्यार्थी आत्म-हत्या करने को विवश होते हैं। जब हम शिक्षा में मूल्यांकन की चर्चा करते है तो परीक्षा प्रणाली के संचालन में उत्पन्न दूषित बिन्दुओं के निराकरण पर तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता है। परीक्षा के सुचारू संचालन से जुड़े सभी स्तरों पर ईमानदारी सजगता और तत्परता वांछनीय है। इन सभी स्तरों पर सावधानी और सुधार की आवश्यकता है। प्रामाणिकता, ईमानदारी से पूरी चौकसी बरतने पर कोई भी पद्धति सफल हो सकती है। निष्ठा के अभाव में नयी से नयी परीक्षा पद्धति भी असफल सिद्ध होगी। अत: आवश्यकता है पद्धति बदलने की ही नहीं राष्ट्रीय चरित्र सुधारने और जीवन दृष्टि बदलने की है। जीवन मूल्यों के अभाव में मूल्यांकन की कोई भी पद्धति सार्थक सिद्ध नहीं हो सकती। समस्या तो राष्ट्रीय चरित्र सुधार की है। भारतीय शिक्षा में मूल्यांकन प्रणाली का विषय विस्तृत है। अनेक सुझावों का संकलन करके बाद, संवाद के माध्यम से चिन्तन की निरन्तरता बनी रहे। 'वादे वादे जायते तत्व बोध:' से मंगलकारी परिणाम निकलता है। अपने शाश्वत अधिष्ठान को न छोड़ते हुए शिक्षा नीति और मूल्यांकन प्रणाली में काल सापेक्ष परिवर्तन अनिवार्य है। ❑

(शिक्षा एवं समाज विज्ञान विषयक अध्येता)

शैक्षिक मूल्यांकन : नौ दिन चले ....

❑ विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी

मूल्यांकन किसी भी कार्य का दिशासूचक होता है जिसके द्वारा समय समय पर यह जाना जा सकता है कि कार्य सही दिशा में जा रहा है या नहीं। अच्छे दिशासूचक के अभाव में यात्रा में निरन्तर आगे बढ़ने के बजाय हम किसी एक ही बिन्दु के चारों ओर भटकते रह सकते हैं। मुझे लगता है कि देश स्वतन्त्र होने के बाद से हम शिक्षा की सही मूल्यांकन की विधि नहीं ढूंढ़ पाए हैं और दिशासूचक के अभाव में मैकालयी शिक्षा व्यवस्था के चारों ओर घूमते हुए नई पीढ़ी के भविष्य को अंधकारमय बना रहे हैं। एक ओर हम विश्व शक्ति बनने का स्वप्न देख रहे हैं और दूसरी ओर देश में निरक्षरों की बढ़ती संख्या को नहीं रोक पा रहे हैं। विश्व में ज्ञान का प्रथम दीप जलाने वाले भारत की शिक्षा व्यवस्था का विश्व की शिक्षा व्यवस्था में कोई योगदान नहीं है। कहावत है कि नौ दिन चले अढ़ाई कोस मगर शिक्षा में 65 वर्ष व अकल्पनीय धनराशि खर्च कर समग्र व सतत् मूल्यांकन की शुरुआत करते ही आठवीं बोर्ड परीक्षा का गुणगान करना मुझे तो नौ दिन चले नहीं एक भी कोस जैसा लग रहा है।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष

शिक्षा व परीक्षा का साथ अनन्तकाल से रहा हैं। भारत की गुरुकुल व्यवस्था में मौखिक या प्रायोगिक परीक्षा द्वारा मूल्यांकन किया जाता था। शिष्य द्वारा एक पाठ आत्मसात करने पर ही उसे अगला पाठ पढ़ाया जाता था। भारत में लिखित परीक्षा की परम्परा का उल्लेख नहीं मिलता। कहते हैं कि विश्व में लिखित परीक्षा का प्रथम प्रयोग सन 606 में चीन में राजा के अधिकारियों के चयन हेतु किया गया था। इसके बाद यूरोप के विभिन्न देशों में लिखित परीक्षा का प्रयोग हुआ। स्कूल में मेट्रिकुलेशन की परीक्षा का प्रचलन इंग्लैण्ड में उन्नीसवीं शताब्दि में प्रारम्भ हुआ। उद्देश्य विश्वविद्यालयों में बिना भेदभाव के योग्य विद्यार्थियों को छांटना था। परीक्षा इंगलैण्ड से भारत सहित विश्व के अन्य देशों में पहुँची मगर का इसका उद्देश्य छंटनी करना ही रहा है।

देश के स्वतन्त्र होने से पूर्व ही परीक्षा प्रणाली की कमियों को अनुभव कर लिया गया था। स्वतन्त्रता के बाद शिक्षा में सुधार की बात चली तो सबसे पहले परीक्षा प्रणाली को सुधारने की बात कही गई। 1948 में डॉ. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में बनाए गए देश के पहले शिक्षा आयोग ने शिक्षा में सुधार की प्रथम शर्त के रूप में परीक्षा प्रणाली को वैध, विश्वसनीय तथा पर्याप्त रूप से वस्तुनिष्ठ बनाने पर जोर दिया था। 1952 के माध्यमिक शिक्षा आयोग (मुदालियर आयोग) ने भी परीक्षा सुधार को शिक्षा सुधार से जोड़ते हुए अनेक सुझाव दिए थे। इससे भी शिक्षा में सुधार के वांछित परिणाम नहीं मिले तो 1959 में बैठे आयोग ने धर्म व नैतिक शिक्षा को शिक्षा का भाग बनाने का सुझाव दिया था। 1964 के कोठारी आयोग ने शिक्षा के विभिन्न पहलुओं पर विस्तार से विचार किया और लिखित परीक्षा को विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास को मापने में असफल बताया। कोठारी आयोग ने सतत् मूल्यांकन प्रणाली को अपनाने तथा 10 कक्षा तक किसी को अनुत्तीर्ण नहीं करने पर जोर दिया। इसी बात को स्वीकारते हुए 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में सतत् व व्यापक मूल्यांकन को अपनाने की नीति स्वीकार की गई।

1970 में माध्यमिक शिक्षा बोर्डों की केन्द्रीय समिति ने सुधार की बात को आगे बढ़ाते हुए अंकों के स्थान पर ग्रेड देने व अनुत्तीर्ण करने के स्थान पर उत्तीर्ण विषयों का प्रमाण पत्र देने सहित कई सुधार सुझाए। 1986 की नई शिक्षा नीति में भी सतत् व व्यापक मूल्यांकन को अध्ययन अध्यापन का अभिन्न अंग मानने पर जोर दिया गया। 1990 में श्री राममूर्ती की अध्यक्षता में नई शिक्षा नीति का पुन:समीक्षा की गई तो भी सतत् व व्यापक मूल्यांकन की नीति को यथावत रखा गया। परीक्षा सुधारों पर निरन्तर दृष्टि रखने हेतु बनी समिति ने स्थायी परीक्षा सुधार आयोग गठित करने का सुझाव दिया था।

नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा बाल अधिकार अधिनियम 2009 के नियम 30 में प्रारम्भिक शिक्षा पूर्ण होने तक बालक को बोर्ड परीक्षा से मुक्त करने व विद्यालय द्वारा ही शिक्षा पूर्ण होने का प्रमाण पत्र देने की बात कही गई है। अधिनियम 29, बच्चे में निहित मेधा, शारीरिक क्षमता का सम्पूर्ण विकास बिना भय के करने के निर्देश दिए गए हैं। केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने कक्षा 10 की बोर्ड परीक्षा को वैकल्पिक करने के साथ ही व्यापक एवं सतत् मूल्यांकन को लागू कर दिया है। अधिनियम के कारण राज्य सरकारों ने कक्षा आठ तक परीक्षा समाप्त कर व्यापक एवं सतत् मूल्यांकन को बेमन से लागू कर दिया गया है।

1992 में शिक्षानीति का पुनर्पाठ करते हुए तय किया गया कि परीक्षा सुधार के स्थायी दिशा निर्देश बना दिए जायें। परीक्षा आयोजित करने वाली देश की सभी संस्थाओं को स्थायी दिशा निर्देशों की परिधी में रहते हुए परीक्षा सुधार कार्य करना अनिवार्य हो। दिशा निर्देश तैयार करने हेतु एक अन्तर संस्थानिक समिति गठित की गई जिसमें विश्वविद्यालय अनुदान आयोग,राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद व अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद व राज्य स्तरीय संस्थानों के सदस्य सम्मिलित थे।

अन्तर संस्थानिक समिति की संस्तुतियों को लागू करने के उद्देश्य से राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद ने 1994 में परीक्षा सुधार के राष्ट्रीय दिशा निर्देश तैयार किए। इसी की अनुपालना में 1999 में माध्यमिक शिक्षा बोर्डों की केन्द्रीय समिति ने अपनी परीक्षा सुधार नीति तैयार की। तब सभी बोर्डों ने प्रश्न पत्र निर्माण व उत्तर पुस्तकें जाँचने मे वस्तुनिष्ठता लाने के अनेक उपाय लागू किए। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद ने गैर शैक्षिक विषयों के मूल्यांकन हेतु आन्तरिक मूल्यांकन की विस्तृत योजना बना कर उसे केन्द्रीय विद्यालयों, नवोदय विद्यालयों सहित कुछ प्रदेशों में प्राथमिक व उच्च प्राथमिक स्तर पर लागू किया।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद द्वारा 1975 से 2005 तक जारी शिक्षा की राष्ट्रीय परिचर्या की रूपरेखा में भी मूल्यांकन पर एक अध्याय रख कर परीक्षा सुधार पर जोर दिया गया। 2006 में परीक्षा सुधार पर बनाए राष्ट्रीय फोकस समूह ने परीक्षा सुधार पर अपनी रिपोर्ट में कक्षा 5, 8 व 11 में किसी प्रकार की बोर्ड परीक्षा आयोजित नहीं करने, कक्षा 10 की बोर्ड परीक्षा को वैकल्पिक करने, प्रशासन की सुविधा के स्थान पर विद्यार्थी की मांग पर परीक्षा आयोजित करने पर जोर दिया। समूह ने यह भी कहा कि बालक के सम्पूर्ण विकास हेतु शैक्षिक, सहशैक्षिक गतिविधियों के साथ ही व्यक्तिगत गुणों, रुचियों व दृष्टिकोण के मापन व्यापक एवं सतत् मूल्यांकन द्वारा जावे।

नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा बाल अधिकार अधिनियम 2009 के नियम 30 में प्रारम्भिक शिक्षा पूर्ण होने तक बालक को बोर्ड परीक्षा से मुक्त करने व विद्यालय द्वारा ही शिक्षा पूर्ण होने का प्रमाण पत्र देने की बात कही गई है। अधिनियम 29, में बच्चे में निहित मेधा, शारीरिक क्षमता का सम्पूर्ण विकास बिना भय के करने के निर्देश दिए गए हैं। केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने कक्षा 10 की बोर्ड परीक्षा को वैकल्पिक करने के साथ ही व्यापक एवं सतत् मूल्यांकन को लागू कर दिया है। अधिनियम के कारण राज्य सरकारों ने कक्षा आठ तक परीक्षा समाप्त कर व्यापक एवं सतत् मूल्यांकन

को बेमन से लागू कर दिया गया है।

ढाक के फिर वही तीन पात

कक्षा में बच्चे को अनुत्तीर्ण नहीं करने का विचार शिक्षकों व शिक्षा प्रशासन से जुड़े अन्य घटकों को पच नहीं रहा है? विद्यालयी व्यवस्था बच्चों को अनुत्तीर्ण पास करने के अपने अधिकार को छोड़ने के मूड में नहीं है। नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा बाल अधिकार अधिनियम 2009 के कारण बच्चों को अनुत्तीर्ण नहीं करने का आदेश लागू होने के साथ ही इसका विरोध होने लगा है। हरियाणा की शिक्षा मंत्री गीता भुक्कल की अध्यक्षता में बने एक उच्च स्तरीय पेनल ने कहा है कि आठवीं कक्षा में बच्चे के स्वत: उत्तीर्ण होने से कक्षा दसवीं में पहुँचने वाले बच्चों की गुणवत्ता कम हो रही है। दसवीं बोर्ड का परिणाम कम हो रहा है। पेनल ने मांग की है कि प्रारम्भिक शिक्षा से माध्यमिक शिक्षा में जाने से पूर्व बच्चों की छटनी करनी आवश्यक है। पेनल का गठन 2012 में गुजरात, छत्तीसगढ़, असम, हरियाणा आदि 20 राज्यों के शिक्षा मंत्रियों की मांग पर किया गया था। बहुत से अभिभावक भी इस मांग के समर्थक है।

राजस्थान में विधान सभा चुनाव से पूर्व आठवीं की परीक्षा कराने की मांग इतनी प्रबल रही कि भाजपा के चुनाव अभियान का नेतृत्व कर रही श्रीमती वसुन्धरा राजे ने आश्वासन दिया कि उनकी सरकार आने पर वे इस विषय कुछ करेगी। चुनाव बाद बनी भाजपा सरकार नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा बाल अधिकार अधिनियम के विरुद्ध जा नहीं सकती थी अत: सरकार ने आठवीं बोर्ड परीक्षा का विकल्प प्रस्तुत कर आवेदन आमंत्रित किए हैं। शहरी क्षेत्रों के कई विद्यार्थियों ने जुलाई 2014 में होने वाली बोर्ड परीक्षा के दिए सहमति दी है। इस परीक्षा से कौनसा हेतु सिद्ध होगा इस विषय में स्थिति अभी स्पष्ट नहीं है।

स्पष्ट है कि स्वतन्त्रता बाद से 60 वर्ष निरन्तर प्रयास करने के बाद हम परीक्षा प्रणाली को बदल कर व्यापक एवं सतत् मूल्यांकन की प्रणाली लागू कर पाए हैं। एक दो वर्ष की छोटी अवधि में ही उसे त्यागने का मानस बनाने लगे हैं। इस तरह परीक्षा सुधारों के विषय में 9 दिन चले नहीं एक भी कोस की स्थिति बन रही है।

इच्छा शक्ति व समर्पण आवश्यक

व्यापक एवं सतत् मूल्यांकन के स्थान पर जिस परीक्षा प्रणाली में विश्वास प्रकट किया जा रहा है वह शिक्षा का सही मूल्यांकन करने में पूर्णत: असफल रही है। परीक्षा द्वारा शैक्षिक विषयों के रटे हुए ज्ञान का ही परीक्षण होता है। बच्चे के व्यक्तित्व के विषय में कोई जानकारी नहीं मिलती। दु:ख की बात है कि विज्ञान में प्रायोगिक परीक्षा मात्र औपचारिकता बन कर रह गई है। बिना प्रायोगिक कार्य किए 80 से 100 प्रतिशत अंक पा रहे हैं। यही कारण है कि अच्छे तकनीकी संस्थानों से निकले युवा भी नौकरी के अभाव में बेरोजगारों की भीड़ बढ़ा रहे हैं।

शिक्षा व्यवस्था में सुधार में परीक्षा सुधार की प्रथम शर्त है। हमने शिक्षा व्यवस्था में सुधार किए बिना ही व्यापक एवं सतत् मूल्याकंन को लागू करने का प्रयास किया है। परीक्षा प्रणाली आज एक बड़े उद्योग में बदल चुकी है। निहित स्वार्थ परीक्षा को पुख्ता करने में लगे हैं। शिक्षक वर्ग व शिक्षा प्रशासन से जुड़े लोगों के लिए भी यह सुविधाजनक है। अत: दृढ़ इच्छाशक्ति के बिना कोई बदलाव सम्भव नहीं दिखता। वर्तमान में सम्पूर्ण प्रशासनिक शक्ति राजनैतिक नेतृत्व में सिमट कर रह गई है। राजनैतिक नेतृत्व वोट बटोरने की चिन्ता से ही नहीं उभर पाता, शिक्षा सुधार उसके चिन्तन का विषय नहीं है। शिक्षा का स्वतन्त्र नियामक बना कर ही कुछ किया जा सकता है। शिक्षा का व्यापक एवं सतत् मूल्याकंन अप्राप्य लक्ष्य नहीं है। देश की परम्परागत शिक्षा व्यवस्था को पुन: स्थापित करने के मार्ग पर चल रहे पुनरुत्थान ट्रस्ट अहमदाबाद ने अपने प्रयोग में निष्ठा के बल पर व्यापक एवं सतत् मूल्यांकन को सहज लक्ष्य माना है। ❑

(बाल एवं विज्ञान विषयक लेखक)

राजर्षि महाविद्यालय अलवर इकाई ने मनाया नववर्ष

राजस्थान विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) की स्थानीय इकाई राजर्षि महाविद्यालय, अलवर द्वारा चैत्र शुक्ल नव संवत्सर वर्ष प्रतिपदा के अवसर पर एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया। 'भारतीय नववर्ष की वैज्ञानिक महत्ता' पर संगोष्ठी को सम्बोधित करते हुए मा. कैलाश चन्द (क्षेत्रीय बौद्धिक प्रमुख) ने अपने उद्बोधन में कहा कि भारतीय काल गणना अत्यधिक वैज्ञानिक तथा सूर्य व चन्द्रमा की गतियों पर आधारित है। आज के दिन ही भगवान श्री रामचन्द्र जी का राज्याभिषेक हुआ तथा सम्राट विक्रमादित्य ने इसी दिन विदेशियों पर विजय प्राप्त की। हमारे धार्मिक, सामाजिक कार्यक्रम, त्यौहार, विवाह आदि इसी वर्ष के अनुसार मनाये जाते हैं। इस अवसर पर कार्यक्रम के अध्यक्ष प्राचार्य डॉ. घनश्याम लाल तथा विशिष्ठ अतिथि संघ के विभाग प्रचारक श्री मुरली मनोहर, उपाचार्य डॉ. डी.सी. गुप्ता एवं प्रान्तीय संयुक्त मंत्री डॉ. गंगाश्याम गुर्जर उपस्थित थे। कार्यक्रम के अन्त में इकाई सचिव महेश चन्द्र शर्मा ने आभार व्यक्त किया। कार्यक्रम का संचालन डॉ. अजय कुमार वर्मा ने किया।

बदहाली के स्कूल

शिक्षा अधिकार कानून लागू करते समय दावा किया गया था कि तीन साल के भीतर स्कूलों में मूलभूत सुविधाएं मुहैया करा दी जाएंगी। बुनियादी ढांचे के लिए जहां 2013 की समय-सीमा तय की गई, विद्यार्थी-शिक्षक अनुपात को अपेक्षित स्तर पर लाने के लिए 2015 की। मगर हकीकत यह है कि आज भी स्कूलों की दशा में कोई उल्लेखनीय सुधार नहीं हो पाया है। बहुत सारे स्कूलों में न पर्याप्त कमरे हैं, न पीने के पानी, शौचालय, ब्लैकबोर्ड, पाठ्यसामग्री आदि की व्यवस्था। यही नहीं, तमाम राज्यों में अध्यापकों के हजारों पद खाली हैं। ऐसे में नेशनल कोलिशन फॉर एजुकेशन नामक संस्था की ओर से दायर याचिका पर सर्वोच्च न्यायालय ने उचित ही केंद्र और सभी राज्यों से पूछा है कि शिक्षकों की भारी कमी की सूरत में किस तरह शिक्षा अधिकार कानून का लक्ष्य पूरा किया जा सकेगा। बुनियादी शिक्षा के मामले में सरकारों का रुख छिपा नहीं है। केंद्र ने शिक्षा का अधिकार कानून लागू तो कर दिया, पर इसके लिए संसाधन जुटाने की चुनौती से सरकारें आंख चुराती रही हैं। एक तरफ वे विकास के दावे करते नहीं थकतीं, पर दूसरी तरफ शिक्षकों के खाली पद भरने की बात आती है तो धन की कमी का रोना रोने लगती हैं। ज्यादातर राज्य सरकारों ने शिक्षा-मित्र, शिक्षाकर्मी, अतिथि शिक्षक आदि नामों से ठेके पर शिक्षकों की भर्ती का चलन बना रखा है। इसमें न तो अनुबंधित आधार पर पढ़ाने वालों के साथ वेतन-भत्ते के रूप में न्याय हो पाता है न प्रशिक्षित शिक्षक की शिक्षा अधिकार कानून की शर्त पूरी की जाती है।

शिक्षा समवर्ती सूची का विषय है। इसमें सुधार के लिए केंद्र और राज्य सरकारों से समान रूप से संजीदगी की अपेक्षा रहती है। मगर केंद्र भी और राज्य सरकारें भी इस मामले में लापरवाह दिखती हैं। देश में डेढ़ लाख स्कूलों की कमी है। मौजूदा स्कूलों में अध्यापकों के बारह लाख पद रिक्त हैं। कायदे से चालीस विद्यार्थियों पर एक अध्यापक नियुक्त होना चाहिए, पर ज्यादातर स्कूल पैरा-टीचर्स या अनुबंधित शिक्षकों के भरोसे चल रहे हैं। याचिकाकर्ता संस्था के मुताबिक इन स्थितियों के चलते अब भी तीन करोड़ अस्सी लाख बच्चे स्कूली पढ़ाई से वंचित हैं। यों सरकारी स्कूलों की कमी को ध्यान में रखते हुए निजी स्कूलों में पच्चीस प्रतिशत सीटें आर्थिक रूप से कमजोर तबकों के बच्चों के लिए आरक्षित रखने का प्रावधान किया गया, मगर यह कारगर उपाय साबित नहीं हो सका है। इस मामले में निजी स्कूलों की मनमानियां अब तक नहीं रुकी हैं। फिर जिस तरह शहरों में आबादी बढ़ रही है, उससे केवल निजी स्कूलों में सीटें आरक्षित करके शिक्षा अधिकार कानून के लक्ष्य तक पहुंचना कठिन है। ऐसे में यह समझ से परे है कि राज्य सरकारें नए स्कूल खोलने और अध्यापकों की भर्ती के मामले में ढिलाई क्यों बरतती आ रही हैं। शिक्षा के मद में बजटीय प्रावधान जरूरत से काफी कम होने पर लगातार आलोचना होती रही है, मगर सरकारों ने इसे कभी गंभीरता से नहीं लिया। इसके चलते निजी स्कूलों की तादाद लगातार बढ़ी है, जो शिक्षा को दिनोंदिन महंगा बनाते जा रहे हैं। सरकारों का यही रुख रहा तो शिक्षा अधिकार कानून कागजी ही साबित होगा।

परीक्षा, मूल्यांकन और चुनौतियां

वर्ष के अंत में होने वाली परीक्षा के नतीजों के आधार पर किसी बच्चे के व्यक्तित्व का सही आंकलन नहीं होता है। रटन्त तरीके से परीक्षा पास कर ली जाती है। इससे न तो बच्चे की रचनात्मक क्षमता का पता चल पाता है और न ही बच्चे के व्यावहारिक ज्ञान की सही परख हो पाती है। शिक्षा एक एकीकृत व सम्पूर्ण प्रक्रिया है। पढ़ाई को केवल कक्षा व किताबों तक सीमित रखना तो शिक्षा के लक्ष्य व उद्देश्यों के विपरीत है। इसलिए बच्चों को स्कूल में बुनियादी ढांचा, सुविधाएं व लचीलेपन के साथ इनपुट्स इस तरह मिलने चाहिए कि उनसे बच्चे के शैक्षिक, बौद्धिक, शारीरिक सामाजिक और भावानात्मक विकास में मदद मिले। मूल्यांकन पढ़ाने की प्रक्रिया का अभिन्न अंग है। इस तरह प्रभावी पठन-पाठन और प्रभावी मूल्यांकन एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

❑ **बजरंगी सिंह**

आज हमारे समक्ष पारम्परिक परीक्षा प्रणाली और मूल्यांकन को बदलने की नयी चुनौती उभरकर सामने आई है। सतत् एवं समग्र मूल्यांकन पद्धति को विद्यालयों में लागू करते समय विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास को ध्यान में रखा जाना चाहिए। अधिगम एक सतत् प्रक्रिया है। इस लिए मूल्यांकन, अध्यापन एवं अधिगम की प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग है। इसलिए सतत सम्यक मूल्यांकन (सी सी ई) में मूलरूप से विद्यार्थी के ज्ञान की परीक्षा के स्थान पर उसके अधिगम की प्रक्रिया को मूल्यांकन के लिए चुना गया है।

इस तरह की संकल्पना ने रचनात्मक मूल्यांकन की भूमिका को और भी अधिक महत्वपूर्ण बना दिया है। यहां यह भी बताना आवश्यक है कि कई विद्यालय पहले से ही सतत एवं समग्र मूल्यांकन पद्धति को अपनाए हुए हैं। इन विद्यालयों ने कक्षा एक से 8 तक रचनात्मक मूल्यांकन प्रक्रिया को कई वर्षों से क्रियान्वित किया हुआ है। परन्तु उन्होंने इस आंकलन को अधिकतर 'परीक्षण' के रूप में प्रयुक्त किया है, ज्ञान समृद्धि के लिए नही। इसी कारण संबंधित व्यक्ति रचनात्मक मूल्यांकन के उपकरणों और प्रक्रिया को जो प्रकृति से संकलित मूल्यांकन के अनुसार मूल्यांकित करते हैं। जब कि यह प्रक्रिया उसके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं का किस प्रकार मूल्यांकन करने में सहायता करती है।

यह हमें रचनात्मक मूल्यांकन को सशक्त बनाने की आवश्यकता की ओर ले जाता है। क्योंकि हमारा समग्र उद्देश्य रचनात्मक मूल्यांकन द्वारा एकत्रित सूचनाओं के आधार पर अध्यापन-अधिगम प्रक्रिया में सुधार लाकर अधिगम को सुविधाजनक बनाना है। इस प्रकार रचनात्मक मूल्यांकन शिक्षण प्रक्रिया का वह अभिन्न अंग है जो विद्यार्थियों की सहभागिता पर बल देता है। शोध द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि जब विद्यार्थी सहभागिता करते हैं और स्वयं अपने काम के स्वामित्व को संभालते हैं तो अधिगम के प्रति उनकी जिज्ञासा और बढ़ जाती है। दूसरी ओर संकलित मूल्यांकन सार्वजनिक जीवन में उपलब्धियों की एक पहचान बनाता है और हम सभी संकलित मूल्यांकन के उपकरणों एवं प्रक्रिया से परिचित हैं। फिर भी कुछ अध्यापकों के लिए प्रभावशाली रचनात्मक मूल्यांकन के उपकरण तैयार करना एक कठिन चुनौती है।

शिक्षा का लक्ष्य बच्चों को समाज के लिए उत्तरदायी, उत्पादक और उपयोगी सदस्य बनने की क्षमता प्रदान करता है। विद्यालय में छात्रों के लिए सीखने के अनुभवों और सृजित अवसरों के ज्ञान, कौशल और दृष्टिकोण के माध्यम से निर्मित की जाती है। कक्षाकक्ष में छात्र अपने अनुभवों का विश्लेषण और मूल्यांकन करने, शंकाएं अभिव्यक्त

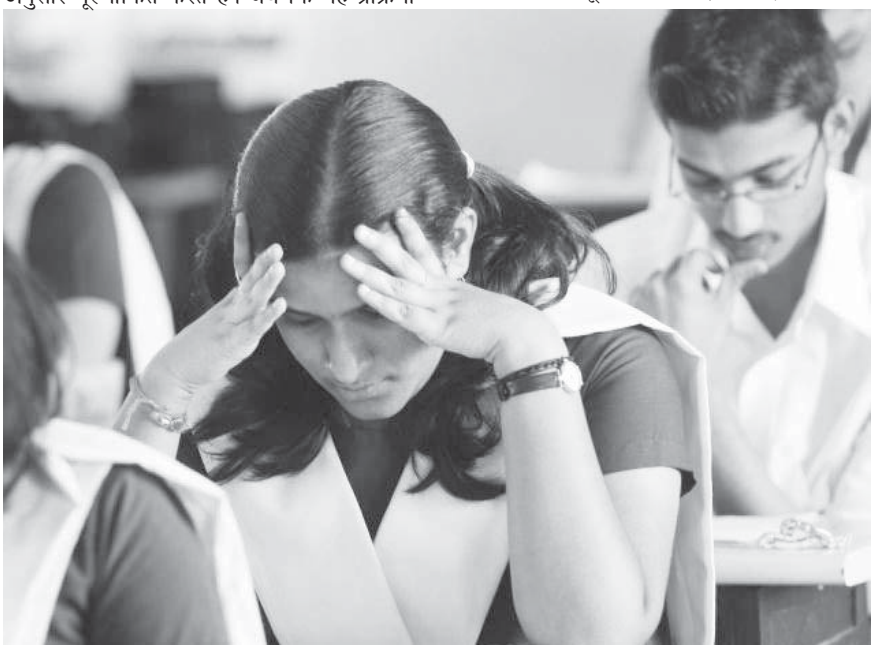

करने, प्रश्न करने, खोजबीन करने और स्वतंत्र रूप से सीखने का कार्य कर सकेंगे। साथ ही साथ शिक्षा का लक्ष्य समाज की वर्तमान आवश्यकताओं और आकांक्षाओं को दर्शाना और इसके चिर स्थायी मूल्यों और मानवी आदर्शों को प्रदर्शित करना है। इस प्रकार संकल्पनात्मक विकास की प्रक्रिया निर्धारित संदर्भों को गहराई तक ले जाने, समृद्ध बनाने तथा नए आयामों को अर्जित करने की निरंतर प्रक्रिया है। यूपी जैसे बोर्ड अभी भी सतत समग्र मूल्यांकन प्रक्रिया को पूर्ण रूप से स्वीकार नहीं कर पाये हैं जरूरत है कि सभी राज्यों में समान रूप से मूल्यांकन प्रक्रिया लागू की जाये।

वर्ष के अंत में होने वाली परीक्षा के नतीजों के आधार पर किसी बच्चे के व्यक्तित्व का सही आंकलन नहीं होता है। रटन्त तरीके से परीक्षा पास कर ली जाती है। इससे न तो बच्चे की रचनात्मक क्षमता का पता चल पाता है और न ही बच्चे के व्यावहारिक ज्ञान की सही परख हो पाती है। शिक्षा एक एकीकृत व सम्पूर्ण प्रक्रिया है। पढ़ाई को केवल कक्षा व किताबों तक सीमित रखना तो शिक्षा के लक्ष्य व उद्देश्यों के विपरीत है। इसलिए बच्चों को स्कूल में बुनियादी ढांचा, सुविधाएं व लचीलेपन के साथ इनपुट्स इस तरह मिलने चाहिए कि उनसे बच्चे के शैक्षिक, बौद्धिक, शारीरिक सामाजिक और भावानात्मक विकास में मदद मिले। मूल्यांकन पढ़ाने की प्रक्रिया का अभिन्न अंग है। इस तरह प्रभावी पठन-पाठन और प्रभावी मूल्यांकन एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

यहां यह समझ लेना भी जरूरी है कि मूल्यांकन से यह भी नहीं समझना चाहिए कि अध्यापक ने सत्र के दौरान जो बताया, उसे छात्र ने सत्र का अंत होने तक कैसे समझा है। जब मूल्यांकन पूरे सत्र के अंत में होता है तो उसके तुरंत बाद अध्यापक व छात्र दोनों प्रक्रिया से दूर हट जाते हैं। ऐसे में मूल्यांकन बिल्कुल अव्यावहारिक बन जाता है क्योंकि वहां प्रक्रिया में सुधार की कोई गुंजाइश नहीं है। इसलिए यह जरूरी है कि पढ़ाने और सीखने की सतत प्रक्रिया में ही मूल्यांकन को जोड़ा जाय। इससे बच्चे के मन में किसी भी परख व परीक्षा का भय और तनाव नहीं होगा।

यहां सवाल उठता है कि इस नयी पद्धति से क्या कोई बदलाव आयेगा? वाह्य परीक्षा की वजह से बच्चे और उनके माता-पिता बहुत मानसिक तनाव एवं चिंता में रहते हैं, खास कर तेरह से पन्द्रह वर्ष के आयु वर्ग के छात्रों पर इसका बहुत ही विपरीत प्रभाव पड़ता है। अभी तक जो व्यवस्था थी। उसके बच्चों को कक्षा व किताबों से बाहर कुछ जानने का मौका ही नहीं मिलता था। क्योंकि वह उसके मूल्यांकन का हिस्सा ही नहीं था। मेरी राय में बच्चों को पूरा मौका मिलना चाहिए कि वे अपनी कल्पनाओं की अनंत उड़ान भर सके। ❑

(महामंत्री, अखिल भारतीय माध्यमिक शिक्षक महासंघ)

आधी-अधूरी शिक्षा

सर्वोच्च न्यायालय ने देश में स्कूलों और शिक्षकों की कमी पर केन्द्र एवं राज्य सरकारों को नोटिस जारी कर उनसे जवाब मांगा है। एक गैर सरकारी संगठन की ओर से देश में शिक्षा के अधिकार के आधे-अधूरे क्रियान्वयन को लेकर दायर याचिका पर सर्वोच्च न्यायालय ने यह नोटिस जारी किया है। याचिकाकर्ता का कहना है कि आज की तारीख में, देश में डेढ़ लाख स्कूलों और करीब 12 लाख शिक्षकों की कमी है। लेकिन सच इतना डरावना है कि शिक्षा के अधिकार का कोई अर्थ नहीं रह जाता। सच यह है कि हमारे नीति-नियंता कागजी बातें कितनी भी करें, शिक्षा क्षेत्र का हमारे यहां कोई धणी-धोरी नहीं है। सरकारी और गैर सरकारी क्षेत्र का फर्क किसी से छिपा नहीं है। सरकारी में ही केन्द्र और राज्य सरकारों के स्कूलों में साधन-सुविधाओं का फर्क हम 365 दिन अपनी आंखों से देखते हैं। सरकारी स्कूलों की जो दुर्दशा है, वह किस सरकार-राजनेता, न्यायालय-न्यायाधीश अथवा गैर सरकारी संगठन के कर्ता-धर्ताओं से छिपी है। हमारे अधिकांश स्कूलों में न भवन हैं न शिक्षक, न बिजली है न पानी है।

न खेल के मैदान हैं और ना ही बच्चों के लिए शौचालय। फिर हम किस शिक्षा के अधिकार की बात करते हैं। इसे देने के लिए जो कानून बना है, उसे लागू करने वाली सरकारों के बिरले ही मंत्री, मुख्यमंत्री और सचिव ने पढ़ा होगा। फिर हम दावा करें कि हमने भारत में शिक्षा का अधिकार लागू कर दिया पर यह देश की नहीं अपनी ही आंखों में धूल झोंकने जैसा है। यदि वाकई हम भारतीय शिक्षा की दशा सुधारना चाहते हैं, उसे एक नई दिशा देना चाहते हैं तो सबसे पहले हमारे नेताओं को इस क्षेत्र में राजनीति बंद करनी होगी। स्कूल खोलने से लेकर उन्हें क्रमोन्नत करने तक के सारे काम मेरिट से करने होंगे। शिक्षा और शैक्षिक ढांचे की गुणवत्ता को मजबूत बनाना होगा।

सरकारी और गैर सरकारी स्कूलों का फर्क मिटाना होगा। बच्चों और अभिभावकों में यह विश्वास पैदा करना होगा कि सरकारी स्कूल भी उतने ही अच्छे हैं। वे हैं भी लेकिन हमारी सड़ी-गली राजनीतिक व्यवस्था ने पेड़ के नीचे स्कूल खुलवा दिए, बिना शिक्षक के खुलवा दिए। शिक्षक हों तो भी नहीं के बराबर। 365 दिन उनके माथे पर कोई ना कोई काम होता है। इस सबसे पार पाने का आसान रास्ता है मंत्री और सारे सरकारी अफसर-कर्मचारियों के बच्चों के लिए सरकारी स्कूलों में ही पढ़ने की अनिवार्यता लागू करना। जब उनकी ऐडियां फटेंगी तभी उन्हें औरों का दर्द पता चलेगा। शिक्षकों को अन्य तमाम तरह के कामों से मुक्त करके केवल शिक्षा देने के काम पर लगाना भी बड़ी चुनौती है। आज बिना परीक्षा ही आठवीं में पास करना कैसे बच्चे तैयार करेगा? शिक्षा का मामला इच्छाशक्ति का ज्यादा है। वो हुई तो शिक्षा क्षेत्र सुधर जाएगा नहीं तो उसका भगवान ही मालिक है।

सतत् एवं समग्र मूल्यांकन का औचित्य

❑ डॉ. रेखा भट्ट

केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE) द्वारा संचालित विद्यालयों में निर्धारित पाठ्यक्रम के आधार पर पारम्परिक मूल्यांकन पद्धति में परिवर्तन किया गया तथा सतत् एवं समग्र मूल्यांकन पद्धति CCE (Contineuous & Comprehensive Evaluation) को प्रारम्भ किया। इसमें विद्यार्थी के मूल्यांकन हेतु निर्धारित पाठ्यक्रम के अतिरिक्त विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास संबंधी पहलुओं का भी मूल्यांकन करने का प्रावधान रखा गया है। इस पद्धति में केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के निर्देशों के आधार पर शैक्षणिक, सहशैक्षणिक, व्यावहारिक व व्यक्तिगत क्षेत्रों में विद्यार्थी का आंकलन किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य विद्यार्थी की प्रतिभा को पहचानना तथा उसको सकारात्मक दिशा देना है।

सी.सी.ई. के अन्तर्गत कक्षा आठवीं तक उत्तीर्ण-अनुत्तीर्ण के मापदण्ड को ही समाप्त कर दिया गया है। सभी विद्यार्थी सत्र के अन्त में उत्तीर्ण माने जाते हैं। बच्चों में अध्ययन के तनाव को कम करने के लिए सरलतम विधि द्वारा भी मूल्यांकन किया जा सकता है। किन्तु मूल्यांकन के अभाव में वह प्रयास ही नहीं करेगा तथा क्षमताओं का पूर्ण उपयोग नहीं करेगा, इसमें यह पद्धति द्वारा विद्यार्थी की प्रतिभा का सही मूल्यांकन कैसे हो सकता है।

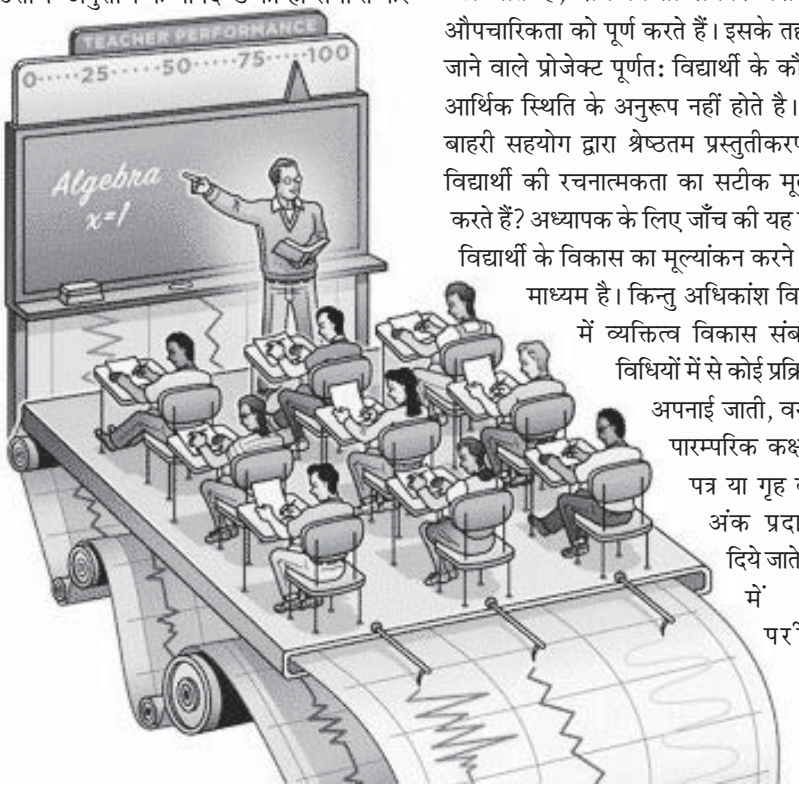

CCE मूल्यांकन के अन्तर्गत सम्पूर्ण शैक्षणिक सत्र के दो भाग (term) है। प्रत्येक भाग में सभी विषयों के दो-दो टेस्ट होते हैं, जिन्हें फॉर्मेटिव असेसमेन्ट कहा गया है। यह बेहद अनौपचारिक तरीके से विद्यार्थी को पूर्व सूचना देते हुए कई रूपों में लिया जाता है, जैसे क्विज, आशुभाषण, दृश्य-श्रव्य परीक्षण, वाक् परीक्षण तथा लेखन आदि। इस प्रक्रिया में सबसे पिछली कतार के बच्चे भी भाग लेने का अवसर पाते हैं। किन्तु इसका लाभ केवल प्रतिभाशाली विद्यार्थी ही उठा पाते हैं, शेष किसी प्रकार परीक्षा की औपचारिकता को पूर्ण करते हैं। इसके तहत् दिये जाने वाले प्रोजेक्ट पूर्णत: विद्यार्थी के कौशल व आर्थिक स्थिति के अनुरूप नहीं होते है। ऐसे में बाहरी सहयोग द्वारा श्रेष्ठतम प्रस्तुतीकरण, क्या विद्यार्थी की रचनात्मकता का सटीक मूल्यांकन करते हैं? अध्यापक के लिए जाँच की यह विधियाँ विद्यार्थी के विकास का मूल्यांकन करने के एक माध्यम है। किन्तु अधिकांश विद्यालयों में व्यक्तित्व विकास संबंधी इन विधियों में से कोई प्रक्रिया नहीं अपनाई जाती, वरन् वही पारम्परिक कक्षा जाँच पत्र या गृह कार्य में अंक प्रदान कर दिये जाते हैं। ऐसे में सतत् परीक्षण,

जहाँ तक शैक्षणिक स्तर पर मूल्यांकन प्रणाली का प्रश्न है, सर्वश्रेष्ठ की स्पर्द्धा प्रतिशत अंकों के स्थान पर ग्रेड में परिवर्तित हो गई है, परन्तु समाप्त नहीं हुई है। ग्रेड का विस्तृत क्षेत्र होने से सर्वश्रेष्ठ के स्थान पर छात्रों की संख्या में वृद्धि हो गई है। किन्तु असंतोष व प्रतिस्पर्द्धा व्यापक होने से ष्ट्टश्च का उद्देश्य साकार नहीं होता है। नई मूल्यांकन पद्धति में प्रश्न पत्रों का तरीका भी बदला गया है। जिसमें सीधे प्रश्नों की अपेक्षा विषय की उपादेयता से जुड़े प्रश्न पूछे जाते हैं। इसमें विद्यार्थी अपनी बुद्धि व ज्ञान का उपयोग करते हुए प्रश्न हल करता है। इससे पढ़ाई में गुणात्मक अभिवृद्धि तो होती ही है, किन्तु मेधावी छात्र ही इसमें लाभान्वित होते हैं या विद्यालयी शिक्षण के अतिरिक्त निर्देशन पाने वाले छात्र इसमें उत्तम स्थान हासिल कर पाते हैं। अन्य छात्र स्वयं को पिछड़ा हुआ महसूस करते हैं।

वर्ष पर्यन्त आयोजित परीक्षाओं की संख्या में बढ़ोत्तरी मात्र है। इससे CCE का विद्यार्थी के समग्र विकास एवं रुचिपूर्ण अध्ययन का उद्देश्य गौण हो जाता है। सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को दो भागों में बाँटकर परीक्षा करवाना विद्यार्थी के वार्षिक अन्तिम परीक्षा के बोझ को जरूर कम करता है।

यह पद्धति मूल्यांकन की सतत् प्रक्रिया है। अत: विद्यार्थी को सदैव जागरूक रहने की आवश्यकता है। इसमें विद्यार्थी को सभी प्रकार की सहशैक्षणिक गतिविधियों में उत्साहपूर्वक भाग लेना, समूह में कार्य करना, स्वयं को व्यवस्थित रखना, प्रशासनिक कार्य करने एवं नए कार्यों को हाथ में लेकर पूरा करने का कौशल विकसित होना चाहिए। ये विद्यार्थी को कक्षा-कक्ष से बाहर सीखने को मिलते हैं। इन जाँच प्रक्रियाओं को अनिवार्यता से लागू किया जाना चाहिए।

जहाँ तक शैक्षणिक स्तर पर मूल्यांकन प्रणाली का प्रश्न है, सर्वश्रेष्ठ की स्पर्द्धा प्रतिशत अंकों के स्थान पर ग्रेड में परिवर्तित हो गई है, परन्तु समाप्त नहीं हुई है। ग्रेड का विस्तृत क्षेत्र होने से सर्वश्रेष्ठ के स्थान पर छात्रों की संख्या में वृद्धि हो गई है। किन्तु असंतोष व प्रतिस्पर्द्धा व्यापक होने से CCE का उद्देश्य साकार नहीं होता है। नई मूल्यांकन पद्धति में प्रश्न पत्रों का तरीका भी बदला गया है। जिसमें सीधे प्रश्नों की अपेक्षा विषय की उपादेयता से जुड़े प्रश्न पूछे जाते हैं। इसमें विद्यार्थी अपनी बुद्धि व ज्ञान का उपयोग करते हुए प्रश्न हल करता है। इससे पढ़ाई में गुणात्मक अभिवृद्धि तो होती ही है, किन्तु मेधावी छात्र ही इसमें लाभान्वित होते हैं या विद्यालयी शिक्षण के अतिरिक्त निर्देशन पाने वाले छात्र इसमें उत्तम स्थान हासिल कर पाते हैं। अन्य छात्र स्वयं को पिछड़ा हुआ महसूस करते हैं।

CCE के अनुसार पाठ्यपुस्तकों से हटकर दिये गये कार्यों के लिये विद्यार्थी इन्टरनेट का सहारा लेते हैं। इनमें अध्यापक व अभिभावक कोई योगदान नहीं दे सकते। इस तरह विद्यार्थी नियमित रूप से बहुत अधिक समय इन्टरनेट पर व्यतीत करते हैं। शेष समय सतत् मूल्यांकन के तहत चलने वाली जाँच प्रक्रियाओं में व्यतीत होता है। इस प्रकार विद्यार्थी सामान्य सक्रिय जीवन से तथा सामाजिक सरोकार से दूर होते जा रहे हैं। इन्टरनेट पर विद्यार्थी द्वारा ढूंढी जाने वाली जानकारियाँ, यदि कक्षा में अध्यापक द्वारा विषय के साथ ही दी जाये तो उसका उपयोग सभी विद्यार्थी कर सकते हैं। यह प्रक्रिया किसी भी प्रकार से विद्यार्थी की तकनीकी योग्यता एवं रचनात्मकता को प्रमाणित नहीं करती। तकनीकी रूप से सक्षम करने के लिए कम्प्यूटर विषय सभी विद्यालयों में अनिवार्य रूप से संचालित किये जा चुके है।

प्रत्येक विद्यार्थी के विकास का सतत् परीक्षण एवं उनके सकारात्मक मार्गदर्शन की प्रक्रिया सीमित संख्या के विद्यार्थियों में अपनायी जा सकती है, किन्तु जिन विद्यालयों में छात्रों की बड़ी संख्या है, वहाँ शिक्षक के लिए प्रत्येक विद्यार्थी का वर्ष पर्यन्त व्यक्तिगत, व्यवहारगत, शैक्षणिक, सहशैक्षणिक, अशैक्षणिक मूल्यांकन करते रहना महज औपचारिकता को पूर्ण करना है। कभी-कभी लगता है CCE की मूल्यांकन पद्धति अनुपयोगी कार्यों के बोझ पर चढ़ाया गया तनाव मुक्त शिक्षा का आवरण मात्र है। विद्यालय में विद्यार्थी शिक्षक से यदि अपने विषय का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करते हैं तो वे सत्र के दो भागों में होने वाले शैक्षणिक मूल्यांकन में अपनी योग्यता दिखा सकते हैं। इसी प्रकार अन्य क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा के प्रदर्शन हेतु प्रत्येक विद्यालय में अनेक गतिविधियाँ एवं प्रतियोगिताएँ आयोजित होती है, जहाँ विद्यार्थी को जिला, राज्य व राष्ट्रीय स्तर तक के अवसर प्राप्त होते हैं।

अत: माध्यमिक स्तर के विद्यार्थी की मूल्यांकन पद्धति (सी.सी.ई.) को बहुआयामी व उदार बनाने के साथ-साथ उद्देश्यपरक भी बनाना होगा। ❑

(व्याख्याता, रसायन शास्त्र, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान)

क्या कारगर सिद्ध होगी नवीन परीक्षा प्रणाली ?

❑ अशोक माथुर

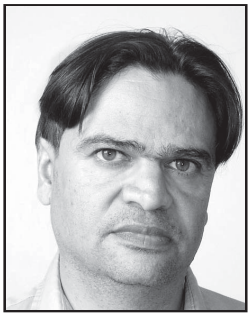

जब परीक्षा में पूछे जाने वाली संभावित विषयवस्तु छात्रों को चार माह पूर्व ही ज्ञात हो जायेगी तो वे उसके अतिरिक्त और सामग्री क्यों पढ़ेगे? इस प्रकार पूरे पाठ्यक्रम का अध्ययन किये बिना भी छात्र अच्छे अंक प्राप्त कर लेंगे। क्या पासबुक और गाइडबुक के प्रकाशक तुरत-फुरत संभावित सामग्री पर पुस्तकें तैयार कर इस प्रणाली की मूल भावना को समाप्त कर देंगे? क्या इस स्तर की क्षमताओं का परिक्षण करने वाले अच्छे प्रश्नों का निर्माण करने वाले शिक्षक पर्याप्त संख्या में उपलब्ध हैं या उन्हें इस कार्य के लिए प्रशिक्षित करने की कोई योजना तैयार है? क्या इस नई प्रणाली में आ सकने वाली अन्य समस्याओं का आंकलन कर उसका समाधान का प्रयास किया है? ऐसे प्रश्नों पर विचार करना वांछनीय है।

शिक्षा प्रणाली में समय-समय पर आवश्यकतानुसार परिवर्तन वांछनीय होता है। परीक्षा पद्धति शिक्षण प्रक्रिया पर गहरा प्रभाव डालती है अत: इसमें बदलाव और भी महत्वपूर्ण हो जाता है।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने हाल ही में परीक्षा सुधार प्रक्रिया के अंतर्गत एक पेनल बनाया। केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मंडल के चेयरमेन विनीत जोशी की अध्यक्षता में कुछ पश्चिमी देशों में प्रचलित परीक्षा प्रणाली का अध्ययन किया गया। उद्देश्य था नये प्रस्तावों को प्रासंगिक, स्वीकार्य तथा अधिक विद्यार्थी-हितकारी बनाना और वर्तमान की रटन्त आधारित शिक्षा प्रणाली के स्थान पर छात्रों में उच्च स्तरीय चिन्तन का विकास करना। हम चाहें हमारे यहाँ इंजीनियरों और डाक्टरों की बढ़ती संख्या पर गर्व करें परन्तु वर्तमान प्रणाली में रटने की प्रवृति के अत्यधिक महत्व के कारण शैक्षिक स्तर में निरन्तर गिरावट आ रही हैं।

हाल ही में विश्व के 73 देशों में प्रोग्राम फॉर इंटरनेशनल स्टूडेंट असेसमेंट द्वारा किए गये अध्ययन से पता लगता है कि शिक्षा के स्तर में हमारा स्थान नीचे से दूसरा है। केवल क्रिगिस्तान का स्थान हम से नीचा हैं। विश्व के बदलते परिवेश में हमें हमारी शिक्षा को अधिक रचनात्मक, तार्किक तथा मानसिक रूप से आनंददायक बनाना होगा।

केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मंडल का मानना है कि शायद खुली पुस्तक परीक्षा में छात्रों का परीक्षा हॉल में पुस्तकें तथा अन्य सामग्री ले जाने का प्रस्ताव कुछ राज्यों को मान्य नहीं हो। अत: इसके स्थान पर प्री अनाउंसड टेस्ट(पी.ए.टी.) योजना पर विचार किया जा रहा है। इसके अन्तर्गत छात्रों को परीक्षा से कुछ माह पूर्व परीक्षा मे पूछे जाने वाले संभावित विषय दे दिये जायेंगे। इसका लाभ यह होगा कि उनके पास इन क्षेत्रों का गहन अध्ययन करने और घिसे पिटे प्रश्नों के स्थान पर तार्किक प्रश्नों के उत्तर देने की तैयारी करने का पर्याप्त समय होगा। इस प्रकार छात्रों में पठन सामग्री की गहन समझ, तार्किक क्षमता, मौलिक दृष्टिकोण, भिन्न प्रकार की सामगी में अन्तर सम्बन्ध स्थापित करना तथा इस प्रकार की अन्य क्षमताएं विकसित की जा सकेगी।

प्रीअनाउंसड टेस्ट योजना कक्षा दस की सभी विषयों तथा कक्षा बारह के मुख्य विषयों में वर्तमान सत्र में ही क्रियान्वित किया जा रहा है। आशा की जा रही है कि इस योजना के परिणाम स्वरुप ऐसी पास बुक,गाइड बुक आदि से छुटकारा मिल जायेगा जो विषय सामग्री को प्रश्नोत्तरी का रूप देकर

छात्रों के ज्ञान को सीमित कर उन्हें सोचने का अवसर नहीं देती।

शिक्षा, ज्ञान और समझ दोनों को ही विकसित करती है। ज्ञान प्राप्ति के लिए सूचनाएं एकत्र करनी होती हैं और इस प्रक्रिया में स्मरण रखने की क्षमता भी कुछ सीमा तक सहायक होती है। विषय की समझ का भी अपना महत्व है। समस्या का समाधान करने हेतु उसे पहले समझ कर उससे जुड़ी अवधारणा या सिद्धान्त की गहराई तक जाना होता है। अन्त में इस ज्ञान और समझ के आधार पर उसे दैनिक जीवन में लागू किया जाता है। इस प्रक्रिया में ज्ञान ही उच्च स्तर की क्षमताओं का आधार बनता है। अब प्रश्न उठता है कि क्या नई पद्धति में ज्ञान के परीक्षण की पूर्ण रूप से उपेक्षा करना वांछनीय है?

इस विषय में एम.डी.एस. विद्यालय के शैलेन्द्र सोमानी कहते है कि हमारे देश में जो सुधार किए जाते हैं वे प्राय: विदेश की परिस्थितियों पर आधारित होते है और उन्हें ऊपर से थोप दिया जाता है। यह बात नई परीक्षा प्रणाली पर भी लागू होती है। होना यह चाहिए कि पहले प्रत्येक स्तर पर व्यापक रूप से विचार विमर्श हो। शिक्षकों, छात्रों, उनके अभिभावकों और शिक्षाविदों से उनकी स्पष्ट राय मांगी जाये कि हमारे विद्यालयों में उनकी क्रियान्विति में क्या समस्याए आएंगी और उन्हें कैसे हल किया जायेगा।

सेंट्रल पब्लिक स्कूल की अलका शर्मा की राय में इस विषय में कुछ अन्य बिंदु भी विचारणीय हैं। खुली पुस्तक परीक्षा प्रणाली में छात्र समय से पूर्व ही स्वयं को विषय सामग्री से अवगत कराने का प्रयास नहीं करेगा क्योंकि परीक्षा के समय वह उसे उपलब्ध होगी।

जब परीक्षा में पूछे जाने वाली संभावित विषयवस्तु छात्रों को चार माह पूर्व ही ज्ञात हो जायेगी तो वे उसके अतिरिक्त और सामग्री क्यों पढ़ेगे? इस प्रकार पूरे पाठ्यक्रम का अध्ययन किये बिना भी छात्र अच्छे अंक प्राप्त कर लेंगे। क्या पासबुक और गाइडबुक के प्रकाशक तुरत-फुरत संभावित सामग्री पर पुस्तकें तैयार कर इस प्रणाली की मूल भावना को समाप्त कर देंगे? क्या इस स्तर की क्षमताओं का परीक्षण करने वाले अच्छे प्रश्नों का निर्माण करने वाले शिक्षक पर्याप्त संख्या में उपलब्ध हैं या उन्हें इस कार्य के लिए प्रशिक्षित करने की कोई योजना तैयार है? क्या इस नई प्रणाली में आ सकने वाली अन्य समस्याओं का आंकलन कर उसका समाधान का प्रयास किया है? ऐसे प्रश्नों पर विचार करना वांछनीय है। ❑

कैसी शिक्षा

'शिक्षा के अंधेरे कोने' में बहुत ही वाजिब सवाल खड़े हैं, लेकिन इसके बावजूद इस तथ्य का कुछ अता-पता नहीं है कि इन सवालों के जवाब आखिर देगा कौन? खासकर प्राथमिक शिक्षा का सारा पहलू ही बेहद पेचीदा है। जिन्हें इसकी सबसे ज्यादा जरूरत है उन बच्चों को और न ही उन बच्चों के अभिभावकों को इस 'जरूरत' का कोई इल्म है और जिनके कंधों पर देश का जुआ है उनके घरों के बचपन पहले से इतने सुरक्षित हैं कि उन्हें ये कोई समस्या ही नजर नहीं आती।

जिस तरह राजनीतिक लोग शिक्षा की गंभीरता को हाशिये पर धकेल रहे हैं वह बहुत ही चिंता का विषय है। कभी-कभी इस उदासीनता में आर्थिक विभेद बनाए रखने की साजिश की बू-सी आती है, जब सोचता हूं कि पढ़ा-लिखा समुदाय किस तरह राजनीतिक लोगों के काबू में रह सकेगा। वे अपना वोट बैंक भी खोएंगे और जनता की अपने ऊपर निर्भरता भी। पढ़ा-लिखा साक्षर समुदाय सवाल दागेगा, सूचना मांगेगा, अधिकार मांगेगा और न मिलने पर उनके लिए लड़ेगा। राजनीति की नई मुश्किलें खड़ी होंगी।

मैं दिल्ली तक के प्राथमिक-माध्यमिक सरकारी स्कूल देखता हूं तो तरस आता है, जहां एक गरीब आदमी भी अपने बच्चे को पढ़ाना वक्त बर्बाद करना समझता है। इस देश का आम नागरिक ठगा गया है। पढ़ने का अधिकार, पढ़ाने का अधिकार, समानता का अधिकार- ये सब शब्द आज भी संविधान में भले ही मौजूद हों, लेकिन एक गरीब के लिए इन शब्दों का कोई अर्थ नहीं है।

Why We Need Examination Reforms?

Education is an attempt to guide and introduce the person to the process and importance of self-realization. While this could be, and often has been, misused in the past to socialize persons, the concept of education excludes processes such as indoctrination and conditioning. An educated person carries the idea of autonomous and authentic person and not one who has been conditioned or indoctrinated. Education is guidance and direction but in a fashion that does not estrange or alienate from oneself but puts one on to the path of meaningful learning and realizing one's true self.

❑ **Himanshu Shekhar**

The examination system of India has remained unchanged from so many years. No doubt, this system is full of stress. That's why most of Newspapers and Magazines publish articles on this topic during examination session. In the education system of India, ability of a student is decided by an exam. In this system there is no place for performance of a student in full academic session. Scoring more and more marks in exams has become the only aim of a student.

Impact of this stressful examination system is immense. Those who are in favour of this system should think about those bad impacts. First of all, if this system is good then all those who secure good marks in these must be brilliant and successful in life but reality is different. Now a days most of institutions don't give admission on marks basis. They have a separate test and this trend is growing rapidly because they have no faith in this examination system. Unfortunately, these institutions too rely on exams for assessment of a student. This faulty examination system is forcing so many students to commit suicide every year. These incidents are growing rapidly. According to an estimates more than 20,000 students has committed suicide in the last year.

The mindset of the society is also responsible for making exams a source of stress. If someone scores good marks in examination then society starts treating him like a hero. On the other hand if someone scores less marks then society treats him just like an untouchable. At this point one question arises. What is the importance of getting more and more marks in an examination? Just getting admission in a reputed educational institution or making first impression to any employer firm? If anyone gets a job then he must have to perform well on practical front. Marks of any examination won't work there. Only knowledge will work there.

We should think about the essence of education. In calling a person educated we make a positive value judgment. There is an expectation that education will improve the person. We expect that an educated person will behave in a better manner than one who is not educated. There is a sense of being let down, disappointment and dismay if an educated person does not conduct himself in a manner that is rational, morally good and socially responsible.

It is clear that education is meant for all-round development of a person. Education is not meant to produce only specialists and professionals. Educationists too stress that education is a holistic process and not only a training of the intellect. It is development of moral, social, aesthetic as well as rational capacity. People might differ on the degree of importance that they place on these various dimensions but most would include all these in their notion of an educated person and these qualities can't be developed by any examination. If these qualities can't be developed and assessed by any examination then we should think about some different way.

As we all know an educated person is not just well-informed (stuffed with facts and figures) or one who has learnt the knack or know-how of doing something. An educated person is not just one who knows what, and how, but also why and this attitude can't be developed by any examination. While one expects that an educated person has knowledge, one also expects that the person has an understanding of the underlying principles of the physical and social – including political and economic – world. An educated person is someone who has evolved his own mental map according to which he steers his life and interprets all new facts and experiences.

Nor does one expect that an educated person's knowledge or understanding is inert but that it informs his perceptions, worldview and how he conducts his life. If a person realizes or learns of the importance of truth, goodness, beauty, love, justice and simplicity but shows no commitment to them in the way he lives his life, we cannot help feeling that person is not truly educated. The minimum we expect from an educated person is that s/he thinks in a rational and critical manner and behaves ethically and responsibly.

A person certainly cannot be said to be educated till he has developed his potentialities as per his individual aptitude and acquired a greater understanding of his core self. Not only does the etymological root of the word 'education' point in that direction but most philosophical and religious traditions urge one to 'know thyself'. This would mean acquiring some understanding of what it means to be oneself, clarity regarding one's values, priorities and aim or direction (as distinct from one's socialization or cultural conditioning – though not necessarily in rejection of them). Only then can an educated person be truly called self-determined and be held responsible for his actions.

Education is an attempt to guide and introduce the person to the process and importance of self-realization. While this could be, and often has been, misused in the past to socialize persons, the concept of education excludes processes such as indoctrination and conditioning. An educated person carries the idea of autonomous and authentic person and not one who has been conditioned or indoctrinated. Education is guidance and direction but in a fashion that does not estrange or alienate from one-

Who Reforms ??

self but puts one on to the path of meaningful learning and realizing one's true self.

We have uncritically internalized the idea that only constant competition and examinations provide the motivation and incentive to learn, to keep us on our mental toes, which is contrary to our experience that we learn best in congenial and supportive situations but million dollar question is how many get it. Under pressure one only tries to cope by relying on previously acquired skills or trying to not look too bad. It is shocking when people actually ask, 'If it were not for exams how would the teacher know what the child has or has not learnt? And if it were not for marks, how would we know where our child stands?'

It is absurd that one needs to point to their own experience: don't you as parents assess your child without examinations and know where she stands, or assess your colleagues and know their strengths and weaknesses without the need for conducting any formal examinations? Any teacher who has taught a child for a while can tell you the real level of the student, down to the spelling errors that she is likely to make before even conducting the exam. If we were not so schooled into accepting the logic of competition and examinations we would see people strive for excellence and voluntarily undertake challenging work in a congenial atmosphere without any incentives.

In present education system teachers, instead of assisting learning, spend most of their time assessing learning. Instead of enabling and equipping students to learn, schools have taken on the function of examining and screening out on the basis of those examinations. So, the need of the hour is to make possible changes in whole education system. Our education system needs examination reforms. Format of exams must be changed. Marks should be given for performance of overall academic year. It should be given on behaviour of student, on his performance in extra curricular activities, on performance in class test, on attendance. If educational institution starts giving marks on behaviour of student then up to a big extent, it will make a big role in improvement of overall personality of a student. ❑

Evaluation System for Self Improvement

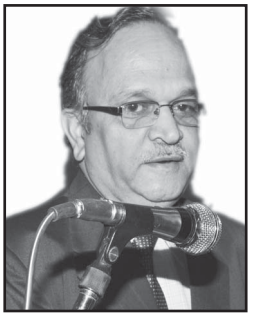

The education system needs to focus on the evaluation system that can enhance self improvement rather than merely judging on scales decided by traditional ways. Many experiments have been conducted to find an appropriate system for evaluation. Pattern of examination systems is again debatable issue. Some school of thought may prefer to opt for subjective type than objective type of questions, Conducting viva voce exam in certain subjects may be helpful but in others it may be practical examination which is of value oriented. Unit wise subdivision of syllabus or having choice of questions also affect preparations for the exams.

❑ **Dr. A. K. Gupta**

Education has remained top priority of a common person to get better opportunity for employment and self improvement. This is the area where parents aims to achieve higher goals thus emotional attachment is bound to be a part of it. Coaching institutions have become centre of attraction to get these goals. This enables to get admission in a desired course where of course better opportunities for good employment exists. Consequently next objective in general becomes to get good marks in the course so that they can have better employment opportunity. At every level it is basically evaluation of the candidate may it be Student or a teacher, which matters a lot.

Education system has numerous intricacies namely level of education, disciplines, institution etc. Facilities made available to a candidate by the institutions or by parents affects to a great extent their job potential. Education may be imparted in different manners e.g. lectures, tutorials, practical, training, tour/ visits, projects, seminar presentation, dissertation or thesis, group discussions, publications or continuing education programmes etc. The formal education supplemented by extracurricular activities makes it comprehensive. Evaluation of every kind of performance remains a matter of concern to anybody related to it. Overall objective of the whole system remains to produce good employee and citizen to serve the country better. Neither the thief can steel it, nor can king can take it. Neither divided amongst brothers, nor too heavy to carry, The more you expand it, the more it increases. Knowledge is the prime wealth.

Employers in general claim to get raw stuff which they are supposed to train again to suit their requirements. Brain drain, not only quitting the country but also leaving the stream for which they were educated, also causes problems to the policy planners.

In the present world of global competition it has become imperative to develop personality so as to serve in any environment or institution at every position to provide maximum output. Adaptability to typical conditions is a major factor to edge upon others. This can be seen only once a person enters the professional field after getting formal education. It is just possible that a person educated or trained for a particular stream may be desired to work for

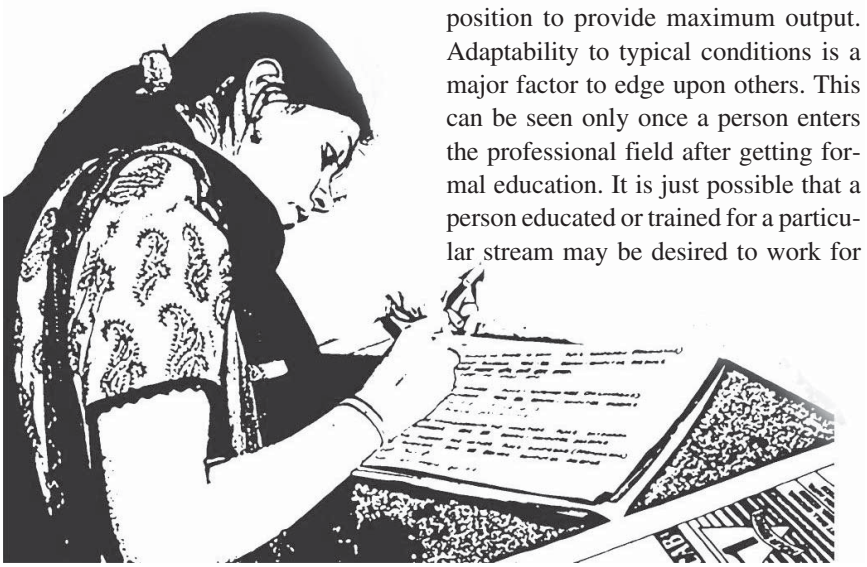

some other work totally different than the original one. Market forces are dominating to rule over prevalent conditions. It has become their requirement to provide jobs with higher salary & perks to candidates from higher educational institutions even if they are not perfectly suitable to. Of course recently the trend has changed in favour of candidates from middle level institutions who are sincere in their duties. Therefore it has become important to produce candidates with academic potential and other qualities e.g. sincerity, hard work, loyalty, dedication etc. Thus self improvement has become the key factor for any persons to become suitable to serve the society better. The evaluation system should consider Vidya Dadati Vinayam, Vinayam Dadati Patratam, Patratva Dhanopmati, Dhanat Dharmam Tatasukham. Knowledge without wisdom makes a person cynical, self centered and arrogant.

The education system needs to focus on the evaluation system that can enhance self improvement rather than merely judging on scales decided by traditional ways. Many experiments have been conducted to find an appropriate system for evaluation. Pattern of examination systems is again debatable issue. Some school of thought may prefer to opt for subjective type than objective type of questions, Conducting viva voce exam in certain subjects may be helpful but in others it may be practical examination which is of value oriented. Unit wise subdivision of syllabus or having choice of questions also affect preparations for the exams.

Frequent interactions between academicians from different areas/ institutions as well as between industry & institutes should be encouraged. Students/ Scholars should be allowed to work in cohesive environment by taking up project work in joint collaborative activities. Earn and learn can be a good pattern to provide professional or vocational education. Even evaluation should be for continuous learning there by for continuous improvement. In the present day world of global competitiveness and with continuous technological, legal, social, political advancements it has become need of the day. Security and secrecy should be maintained for the reliability and integrity of the system. Selection and appointment of examiners (including external), setting of question papers, appropriate remuneration for invigilation or evaluation should be given due weightage.

Opportunities should be made available to maximums persons eligible and willing to take up further studies. Option of central facilities for common use should be encouraged. Old age tradition of Indian education system paving way for teacher (Guru) and disciple (Student) relation should explored and set up.

Corruption and unsocial practices should be eradicated by providing and emphasizing moral education system. Discrimination on any ground should be avoided. Principle of natural justice and growth i.e. without affecting interference of undesired factors and evaluation to promote than discourage interest of a person should remain the target. Materialistic approach in education can lead to a society without ethical values thus developing Asuri Powers than Divine Powers. It is not only class room study but also social mingling which will make things happen in right direction.

"We are responsible for what we are, and what we wish ourselves to be, We have the power to make ourselves. If what we now has been the result of our own past actions, it certainly follows that whatever we wish to be in future can be produced by our present actions, so we have to know how to act."- Swami Vivekanand

Elevation of person into a well educated with high moral values and good human understanding by providing support in desired forms in rightful manners should be objective of any education system. Generation of awareness about present day scenario for any type of requirement for the betterment of the society should be focused. Minimum human intervention in evaluation system should be enforced. Demographic patterns and appropriate planning for overall balanced growth is the key factor to frame a policy for proper just and acceptable evaluation system.

The final goal should be Sarve Bhavantu Sukhin, Sarve Santu Niramayah, Sarve Bhadrani Pashyantu, Maa Kashchit Dukh Bhag Bhaveet. Seeing good in everyone is the beginning of spiritual journey. The objective is clear to form society vis-a-vis nation for overall growth to sustain in the global competition. Thus marching with the global pace in all walks of life with resources available is desirable.❑

(Prof. JNV University, Jodhpur)

Copy Capital: Spotlight back on organised copying in UP

The 'process' begins at the time of registration, when a student from one of these fake schools is enrolled into a recognised school. As per rules, a student appearing for his Class X Board exam has to be registered in a school the previous year, in Class IX. Similarly, a student appearing for his Class XII Board exam should have been registered in Class XI the previous year. "Schools delay the registration process and, in some cases, both the registration and the Board examination forms are filled up simultaneously. Some schools take money in instalments, others want a lump sum at the time of registration,"

❑ **Hamza Khan**

Akash, 17, son of an autorickshaw driver, set himself on fire. His family had been unable to raise an extra Rs 3,000 that his school principal had allegedly demanded to let him copy answers during his Class X Board examination. His parents had reportedly paid Rs 4,000, but that wasn't enough. Akash died the next day.

March 10, Kaushambi: Akshay Sonkar, 18, son of a farmer, had allegedly paid his principal Rs 2,000 to let him copy in his Class XII Board. The principal reportedly wanted Rs 5,000 more and the family couldn't afford it. Akshay consumed poison, but luckily survived.

March 23, Ballia: Villagers in Saraibharati village clashed with policemen outside a college, alleging extortion during an examination. Nine policemen, including a Deputy Superintendent of Police, were injured and 40 villagers arrested. Residents alleged that a student, Nandini Sharma, wasn't allowed to appear for her exam and that her brother Shashikant, who had gone to inquire, was beaten up.

This year, 71,20,265 students registered themselves for their Class X and XII UP Board examinations, 6.74 lakh more than last year. The examination is a milestone they better not skip, but there is an easier, institutionalised way round it — mass copying. But as Akash and Akshay were to find out, that comes at a price. Often, it is the school manager or principal who sets the price, coaxing the families for the maximum money he or she can extract.

Unfair practices during exams are a thriving business in some parts of Uttar Pradesh, especially the eastern districts of Kaushambi, Azamgarh, Ballia and parts of the Samajwadi Party's home turf, including Etah and Mainpuri. A high school or intermediate certificate in these parts costs anywhere between Rs 1,500 and Rs 15,000, sometimes even more.

Among the four categories of schools government, government-aided, government-unaided and unrecognised private or 'fake' the last two are almost always at the heart of the racket. "These unrecognised schools, which operate out of single rooms or even rooftops, enroll students assuring them they can clear their examinations without much trouble," says Prakhar Yadav, who runs a college in Mainpuri. "As exams approach, these schools enroll students in recognised schools in connivance with authorities, thus bringing them into the system."

In July 2012, R P Mishra, presi-

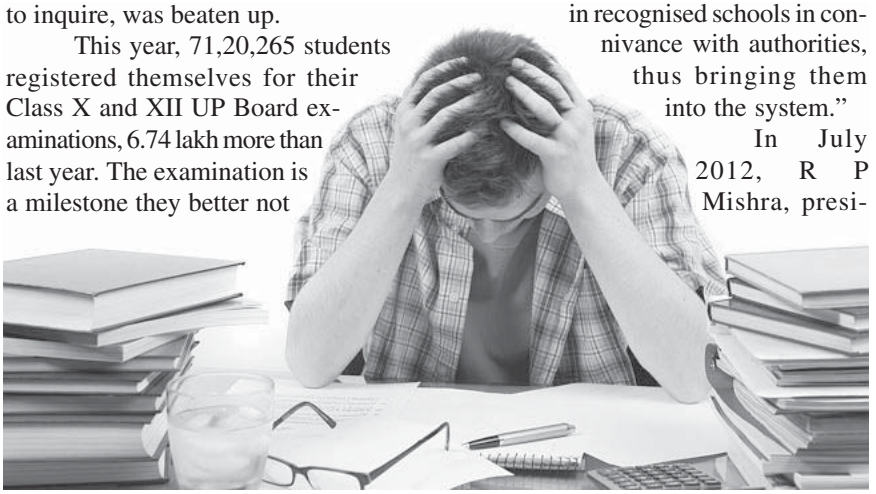

dent of the Uttar Pradesh Madhyamik Shikshak Sangh, who has been campaigning against irregularities in the education department, submitted a list of 351 'fake schools' in Lucknow alone. Umesh Tripathi, then District Inspector of Schools (DIOS), Lucknow, cracked down on these schools and registered FIRs against 229 of them. But, Mishra alleges, the administration then gave in to political pressure and the issue fizzled out.

The 'process' begins at the time of registration, when a student from one of these fake schools is enrolled into a recognised school. As per rules, a student appearing for his Class X Board exam has to be registered in a school the previous year, in Class IX. Similarly, a student appearing for his Class XII Board exam should have been registered in Class XI the previous year. "Schools delay the registration process and, in some cases, both the registration and the Board examination forms are filled up simultaneously. Some schools take money in instalments, others want a lump sum at the time of registration," says Mishra.

Students get themselves enrolled in multiple schools, just to be on the safer side. The managers of these schools usually seek 'favourable' examination centres near their institutions and get them without much trouble. This year, for instance, citing a shortage of examination centres, the administration registered even those centres which were blacklisted last year over corruption charges. Mishra alleges that schools pay Rs 50,000 to a few lakhs to the DIOS to get a centre of their choice.

Secretary, Secondary Education, Shakuntala Yadav, dismisses these charges. "Our job is to conduct examinations and ensure there are enough centres where they can be held. These allegations are levelled by schools which weren't selected as centres. If they are convinced of foul play, why don't they get FIRs registered against the DIOS?"

After the examination centre is allotted, schools try their best to get their teachers appointed as invigilators at these centres. The rule is that subject teachers cannot invigilate an exam of that subject. Yet, there have been several instances of flying squads catching subject teachers during invigilation. A common excuse in this case is lack of staff.

DIOS P C Yadav says subject teachers assisting students an indication of organised copying is a problem in Lucknow too. "We keep coming across subject teachers helping students during exams. Notices are issued to all such centres and action is taken," says Yadav.

Finally, when the exams begin, students can 'buy' the category of copying that suits their pockets. Depending on the money they shell out, students are segregated into three categories and allotted rooms accordingly. Explained school managers, speaking on the condition of anonymity: Category

one, which costs the least, comprises students who are allowed to use their own material for copying. Category two students are dictated answers or can copy them from the blackboard. Category three students don't have to appear for examinations and an impersonator, usually a subject teacher, is arranged for them.

This, in turn, means that teachers running coaching centres are in high demand. Asit Yadav, who runs a coaching centre in Mainpuri, says that a coaching centre teacher can impersonate a student and earn Rs 5,000 to Rs 20,000 per paper.

"Schools are judged by their pass percentage. Parents and students prefer schools that assure them that examinations will be cleared with minimum hassle. Trying to prevent copying hampers this business," he adds.

Baba Har Narayan runs three schools in Etawah. Three years ago, he clamped down on mass copying in his schools and, ever since, the number of students in his school has been constantly declining.

The DIOS sends flying squads to conduct random checks at centres. On the first day of this year's Board exams, a flying squad in Bareilly caught the staff of an exam centre dictating and writing answers on blackboards. An FIR was registered against the centre's superintendent. But the flying squads haven't been much of a deterrent. Ramvir Singh Yadav, an SP leader in Kisni block of Mainpuri, says some centres even put up cameras to look out for these squads.

Baba Har Narayan says some schools employ "dummy flying squads" to extort money. "The members of such 'squads' are usually friends of the principal or manager. They randomly swoop down on candidates and threaten them," he says. The principal then pretends to intervene on the student's behalf and, after the squad leaves, demands money from the student.

For the students, it doesn't pay to be upright, especially at centres with organised copying. Anil Singh, a BA student in Mainpuri, says he found out the hard way. "My friend and I appeared for our intermediate examinations (Class XII) a couple of years ago. I used to study all day while he would while away his time. During examinations, he paid to copy while I was sure my hard work would see me through. But I failed and he cleared with first division," he says to help us personalise your reading experience.

"Students who refuse to pay are discriminated against. Some schools make them sit outside on the grounds, making them outcasts of sorts. While in some other centres, it doesn't matter if you want to copy or not, you have to pay up a certain amount if you want to appear for the exam," says Asit of the Mainpuri coaching centre. Asit says parents are tired of the "copying mafia", but only because they find the 'rates' prohibitive. "Some parents approached me and I proposed that we should start a campaign prepare a banner saying 'Naqal mafia ke virodh mein (against copying mafia)' protest against such examination centres and invite journalists. But the parents declined. They just wanted the school managers to reduce rates, nothing more," says Asit.

There have been attempts to deal with copying in the past. In 1992, Rajnath Singh, as education minister in the Kalyan Singh government, introduced the Anti-Copying Act, making copying a cognisable, non-bailable offence. That year, UP Board's Class X pass percentage came down from 58.03 in 1991 to 14.70; figures for intermediate came down to 30.38 per cent from 80.54 the previous year.

With many students being sent to jail for copying, the Samajwadi Party made it a poll issue before Mulayam Singh Yadav took over as chief minister in December 1993. The Act was later reintroduced and the offence made bailable. The pass percentage for Class X crossed 50 in 1995. Between 1998 and 2002, pass percentages dropped again. In 2004, with the SP government back in the saddle, Mulayam came up with the 'self-centre scheme', ending the rule that students have to sit for Board examinations in centres other than their schools. The pass percentage for Class X jumped to 70.61 per cent.

However, Vasudev Yadav, then secretary of Secondary Education Board, defends the scheme, saying that it helped students concentrate on studies without having to travel to other centres.

Criticising the SP government, BJP's state spokesperson Chandra Mohan says, "It was under the SP patronage that the copying mafia found its feet."

Meanwhile, as another examination season draws to a close, Education Secretary Shakuntala Yadav claims that around 1,500 students have been caught copying and about 50 FIRs registered this year. But given that over 70 lakh students sat for the exams this year, 50 FIRs may end up as a mild statistic just for the record. ❑

Reinventing MATHS

"A high-level committee was set up at the UGC to take stock of the Master of mathematics education programme started in 2012-13 under the meta university concept. The committee saw that it is a viable solution to reach out to more students and the commission has given Rs 1.2555 crore as funding to strengthen the programme. It also invited proposals from universities all over India to try out the meta university concept," says MM Chaturvedi, director, CIC.

❑ Aaditi Isaac

Those enrolling for India's first meta university degree can look forward to monetary support to travel for internships, a mobile maths programme for government school children, mathematical tools for the visually-impaired and more this year as partnering institutions just received Rs 1.255 crore from the University Grants Commission (UGC).

The grant-in-aid for the Master of mathematics education (MME) programme has been equally divided between the partners running it jointly – University of Delhi (DU) and Jamia Millia Islamia. DU intends to use the funds for information and communication technology (ICT) infrastructure, maths exploration workshops, a multimedia lab and students' innovation projects, among other activities, says Jyoti Sharma, assistant professor, MME, Cluster Innovation Centre (CIC), which manages the programme at the university. "We will establish a mathematics plaza at CIC where mathematical games, hands-on activities will be held, mathematical models would be showcased and a historical trajectory of mathematics would be highlighted. We will have a special section of mathematical tools for the visually-impaired. The aim is to make CIC a centre of excellence and a resource hub of mathematics for students, teachers, and mathematicians who can learn and add on to the ideas," says Sharma. There are plans to make maths education mobile for class I to XII students so that those who do not have access to the discipline can still develop an interest in it and study it. "Once a week, mobile vans will go to municipality or government schools or schools which do not have proper infrastructure. Students would reach out to

the community and empower schoolchildren," informs Sharma.

Meta university programme students would be able to go for summer internships as well. "This is the first time that students would intern with institutes (such as IIT Bombay, IIM Calcutta, etc) to understand how education planning and execution takes place. We will facilitate their internships and see to it that they don't pay from their pockets for transport, travel and stay," she informs. The authorities also propose to train teachers to help improve maths education in schools. "We get to see that teachers don't keep pace with the latest changes in pedagogy, etc. To keep them updated and help them introduce innovations in the classroom, teachers' training would be conducted," she says.

"A high-level committee was set up at the UGC to take stock of the Master of mathematics education programme started in 2012-13 under the meta university concept. The committee saw that it is a viable solution to reach out to more students and the commission has given Rs 1.2555 crore as funding to strengthen the programme. It also invited proposals from universities all over India to try out the meta university concept," says MM Chaturvedi, director, CIC.❑

कागजों तक सिमटा शिक्षा का अधिकार

❑ जगमोहन सिंह राजपूत

प्रारंभिक शिक्षा को मूल अधिकारों में शामिल करने के लिए संविधान संशोधन 2002 में हुआ। आरटीई अधिनियम 2009 में संसद से पारित हुआ, इसे एक अप्रैल, 2010 से पूरी तरह लागू होना था। सभी जानते थे कि ऐसा हो नहीं पाएगा क्योंकि न तो व्यवस्था में आवश्यक परिवर्तन किए गए और न ही ऐसे वातावरण का निर्माण किया गया जिससे देश के सारे अध्यापकों तथा समाज के सभी लोगों को लगता कि वे एक महान कार्य में हिस्सेदार बनने जा रहे हैं। स्कूलों तथा अध्यापकों ने इसे 'एक और सरकारी आदेश' भर माना तथा अधिनियम का 'सामान्यीकरण' कर दिया। साधनों, संसाधनों की कमी उसी स्तर पर बनी रही। हां, कमरे बनवाने, फर्नीचर खरीदने आदि पर धन खर्च हुआ और व्यवस्था के कर्णधारों की रुचि उसमें बनी रही। यह संदेश लोगों तक भी गया और उनकी अन्यमनस्कता भी बढ़ी।

यह चुनाव का समय है। हर दल तथा नेता अपनी उपलब्धियां गिनाता है और सपने दिखाता है। कितने ही सपने सपने ही बने रहते हैं मगर उन्हें परोसने वाले बिना हिचक हर चुनाव में उन्हें दोहराते रहते हैं, जैसे गरीबी हटाओ का नारा आज भी है, कल भी था, कल भी चलेगा। कक्षा आठ तक सभी को निशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा देने का निर्देश संविधान में निहित था- लक्ष्य दस वर्ष के अंदर पूरा करना था। एक अप्रैल, 2010 को शिक्षा का अधिकार अधिनियम 'आरटीई' लागू किया गया था- लक्ष्य को तीन वर्ष में पूरा करना था। एक अप्रैल, 2014 को चार वर्ष पूरे हो जाएंगे। मोटे तौर पर सभी जानते हैं कि आज भी 90 प्रतिशत से अधिक सरकारी स्कूल उन मानकों पर खरे नहीं उतरते जिन्हें सरकार ने अधिनियम में शामिल किया है। केवल एक उदाहरण ही पर्याप्त होगा। उत्तर प्रदेश में 1.10 लाख स्कूलों में 4.86 लाख अध्यापक चाहिए। लेकिन अभी केवल 1.77 लाख शिक्षक पदस्थ हैं। हालांकि राज्य सरकार के अनुसार, सभी कुछ ठीक चल रहा है

इस समय देश में औसतन 70 प्रतिशत स्कूल सरकारी है तथा 28-30 प्रतिशत प्राइवेट हैं जो पब्लिक स्कूलों के नाम से जाने जाते हैं। ग्रामीण इलाकों में सरकारी स्कूलों का प्रतिशत औसत से काफी अधिक है। जब भी बच्चों की शैक्षिक उपलब्धियों का आंकलन होता है- परिणाम अत्यंत निराशाजनक ही आते हैं। जो लोग शिक्षा व्यवस्था की 'असलियत तथा जमीनी स्थिति' से वाकिफ हैं उन्हें इन सर्वेक्षणों तथा आंकलनों से कोई आश्चर्य नहीं होता है। सभी कुछ अपेक्षित ही लगता है। तीन वर्ष तक स्कूल जाने के बाद 60 प्रतिशत बच्चे यदि अपना नाम पढ़ नहीं पाते हैं या लिख नहीं पाते हैं तब शिक्षा का अधिकार अधिनियम का उनके लिए या समाज के लिए क्या अर्थ रह जाता है? आज कक्षा एक में नामांकित बच्चों में से केवल 50 प्रतिशत ही कक्षा दस तक पहुंच पाते हैं। इनकी भी एक अलग कहानी है। कक्षा आठ तक कोई परीक्षा नहीं, कक्षा दस और बारह में नकल करने की 'सशुल्क' व्यवस्था। इनमें आठ करोड़ वह बच्चे भी जोड़ लें जो कक्षा आठ के पहले स्कूल से चले जाते हैं तथा दो-तीन साल में लगभग निरक्षरों की श्रेणी में पहुंच जाते हैं। केवल उत्तर प्रदेश में 42 हजार स्कूलों में एक शिक्षक तैनात है और 62 हजार में केवल दो अध्यापक। इनमें अधिकांश शिक्षाकर्मी हैं जो अनिश्चित भविष्य की आशंका में लगातार परेशान रहते हैं।

प्रारंभिक शिक्षा को मूल अधिकारों में शामिल करने के लिए संविधान संशोधन 2002 में हुआ। आरटीई अधिनियम 2009 में संसद से पारित हुआ, इसे एक अप्रैल, 2010 से पूरी तरह लागू होना था। सभी जानते थे कि ऐसा हो नहीं पाएगा क्योंकि न तो व्यवस्था में आवश्यक परिवर्तन किए गए और न ही ऐसे वातावरण का निर्माण किया गया जिससे देश के सारे अध्यापकों तथा समाज के सभी लोगों को लगता कि वे एक महान कार्य में हिस्सेदार बनने जा रहे हैं।

स्कूलों तथा अध्यापकों ने इसे 'एक और सरकारी आदेश' भर माना तथा अधिनियम का 'सामान्यीकरण' कर दिया। साधनों, संसाधनों की कमी उसी स्तर पर बनी रही। हां, कमरे बनवाने, फर्नीचर खरीदने आदि पर धन खर्च हुआ और व्यवस्था के कर्णधारों की रुचि उसमें बनी रही। यह संदेश लोगों तक भी गया और उनकी अन्यमनस्कता भी बढ़ी। इस अधिनियम को संसद में सर्वसम्मति से पास किया था मगर जब क्रियान्वयन की स्थिति आई तब अनेक राज्य सरकारों ने केंद्र सरकार को स्पष्ट कहा कि उनके पास आवश्यक धनराशि उपलब्ध नहीं है। यदि राज्य सरकारें सतर्क होतीं और उनकी प्रतिबद्धता हर बच्चे को अच्छी गुणवत्ता वाली शिक्षा देने की होती तो तैयारी अधिनियम के 2009 में संसद में स्वीकृत होने के साथ ही तेजी से शुरू हो जाती। लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ। सर्वशिक्षा अभियान जब लागू किया गया था तब 'अभियान' यानी मिशन शब्द के उपयोग पर काफी चर्चा हुई थी- क्या सरकारें 'मिशन मोड' में कार्य करने में सक्षम

है? सरकार कोई भी हो, वह तो उत्तर 'हां' में ही देगी। इसी कारण आज भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय में अनेक 'मिशन' चल रहे हैं। लोग इन्हें केवल सरकारी कार्यक्रम या योजना ही मानते हैं। शिक्षा अधिकार अधिनियम के क्रियान्वयन के घोर शिथिलीकरण का यह भी एक महत्वपूर्ण कारक है।

लोगों में यह विचार बड़ी तेजी से स्वीकार्य होने लगा है कि सरकारी तंत्र तथा उससे जुड़े लोग चाहते ही नहीं है कि संविधान में निहित बराबरी तथा समानता का अधिकार समाज के हर वर्ग को मिले। नीति-निर्धारकों से लेकर क्रियान्वयन के अंतिम छोर तक व्यवस्था के अंग बने लोग और समाज का साधन संपन्न वर्ग अपने बच्चों की शिक्षा को लेकर पूरी तरह संतुष्ट है। इनमें केवल कुछ प्रतिशत बच्चे ही सरकारी स्कूलों में पढ़ते होंगे। बाकी सभी के लिए पब्लिक यानी प्राइवेट स्कूल व्यवस्था है, अंग्रेजी माध्यम है; देश में ही नहीं, विदेश जाने के रास्ते खुले हैं। जब समाज में संचालन, निर्धारण, क्रियान्वयन वर्ग विशेष के हाथ में सिमट जाता है तब वे अन्य की चिंता क्यों करें? ऐसा तो तभी संभव था जब स्वतंत्रता के बाद बनी हर सरकार गांधी के उस 'जंतर' को याद रखती कि जब भी कोई नया प्रकल्प प्रारंभ करो, सबसे पहले यह सोचो कि 'पंक्ति के अंतिम छोर पर खड़े व्यक्ति' को उससे क्या लाभ मिल सकेगा- उनकी ऐसी अपेक्षा केवल सरकारों से नहीं, व्यक्तियों से भी थी।

'बेसिक एजुकेशन', या बुनियादी तालीम की संकल्पना और क्रियान्वयन हर व्यक्ति को शिक्षा देने का तथा साथ में कौशल सिखाने का वह चिंतन था जिसमें लक्ष्य वही थे जो शिक्षा अधिकार अधिनियम में निहित हैं। फर्क यह है कि बेसिक एजुकेशन/ बुनियादी तालीम, समान स्कूल व्यवस्था तथा पड़ोस का स्कूल जैसी अवधारणाओं के किनारे कर 1947 के बाद भी शिक्षा व्यवस्था का प्रारूप जैसे का तैसा बरकरार रखा गया. समाज के जो वर्ग सर्वाधिक वंचित थे उन्हें रोटी, कपड़ा, मकान के साथ यदि एक अच्छा स्कूल मिल जाता तो उनका जीवन स्तर स्वत: ही ऊपर उठ जाता। आज अल्पसंख्यक समुदाय यानी मुस्लिम समाज को लेकर अनेक प्रकार की अवधारणाएं उनकी कमजोर आर्थिक और शैक्षिक स्थिति को लेकर सामने आती हैं। आज इस वर्ग की स्थिति केवल अशिक्षा, बेरोजगारी के तत्वों से ही प्रभावित है। यदि मुस्लिम बहुल, अनुसूचित जाति/जनजाति बहुल क्षेत्रों में 'चलने वाले स्कूल, पढ़ाने वाले अध्यापक तथा आवश्यक संसाधन' 50-60 वर्ष पहले मिलते तो आर्थिक दृष्टि से संपन्नता अवश्य आती, समाज का दृष्टिकोण बदलता और देश की प्रगति की गति बदलती।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम (आरटीई) में भी इस सबको दोहराने की जरूरत पड़ी है। किसी को भी विकास नहीं है कि अगले चार-छह साल में भी 'आरटीई' पूरी तरह लागू हो पाएगा। वादों पर सरकारें खरी नहीं उतरती हैं और वे इसकी चिंता भी नहीं करती हैं. इस चुनाव में भी जीडीपी का छह प्रतिशत शिक्षा को आवंटित करने का वादा किया गया है। अभी यह चार प्रतिशत से भी कम रहता है। जब तक नीति-निर्धारक यह समझ नहीं रखते हैं कि शिक्षा में उचित निवेश न करने के कारण देश को कितनी बड़ी हानि हो रही है तब तक बड़ा यानी आमूलचूल परिवर्तन असंभव ही है। भारत और भारतीयों की समावेशी प्रगति की अवधारणा के सफल होने का रास्ता जब गांवों के सरकारी स्कूलों के दरवाजे से होकर गुजरेगा तब भारत दुनिया की निगाहों में अपनी श्रेष्ठता स्थापित कर सकेगा। ❑

(लेखक एनसीईआरटी के निदेशक रहे हैं)

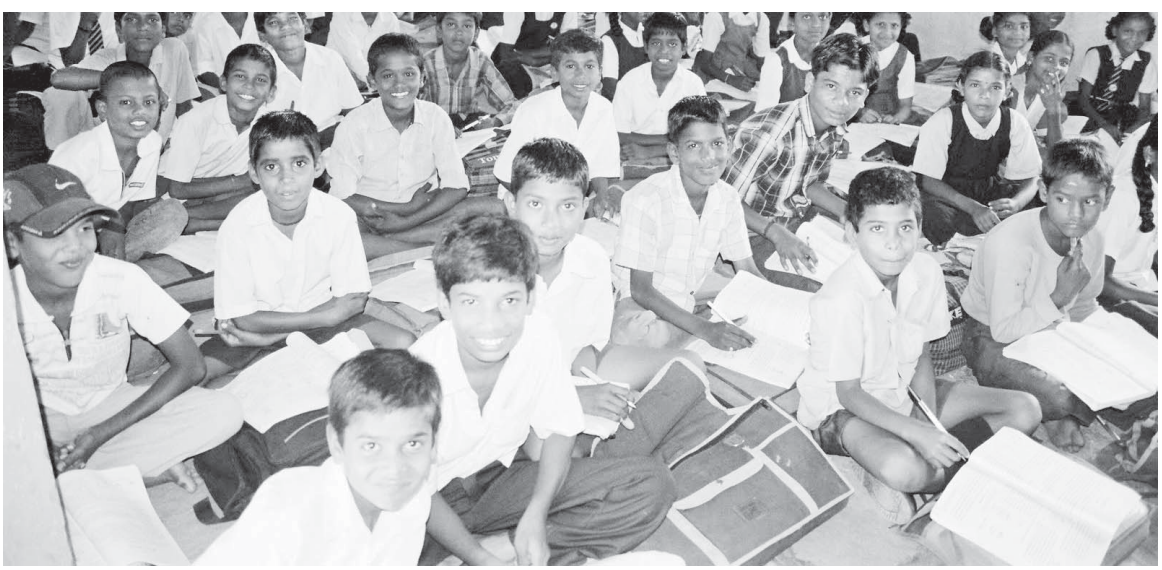

Which party will give India an edge-ucation?

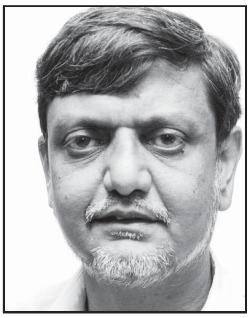

There has been much celebration that primary class enrolments have reached near saturation over the past decade and a half. IITs and IIMs are much lauded. But some key issues shackle the gigantic education system. These are: retaining students beyond elementary stage, providing quality education, opening doors of higher and technical education, and tailoring education to job market needs.

❑ **Subodh Varma**

With over 300 million students and 6.5 million teachers, India's education system touches most families. Arranging for the education of children and youth is increasingly a big concern for families - it is seen as a path of escape from harsh circumstances. Yet, education is seldom part of the election discourse. Netas gloss over it, manifestos dismiss it in a few lines.

There has been much celebration that primary class enrolments have reached near saturation over the past decade and a half. IITs and IIMs are much lauded. But some key issues shackle the gigantic education system. These are: retaining students beyond elementary stage, providing quality education, opening doors of higher and technical education, and tailoring education to job market needs.

Although all states have around 100% primary enrolment things unravel thereafter. Nationally, nearly half the students who enter Class 1 are out of school by Class 10. This varies across states - 77% in Assam, nearly 70% in Jharkhand and Rajasthan to a more manageable 16% in Himachal or about 25% in TN and UP. Among the more disadvantaged sections, dropout rates are higher - dalits suffer a dropout rate of 56% and adivasis 71%. Among the poorer sections, extended education is a pipedream. In villages, over 51% of the poorest is illiterate and only a minuscule 0.4% go beyond higher secondary. In cities, 42% of the poorest remain illiterate, just 1.5% complete higher studies.

Quality education suffers right from the base level. An alarmingly large proportion of institutions provide belowpar education. The resulting scramble for private tuitions burdens families.

According to ASER 2013, a survey of rural students, the average proportion of children in Class 5 who could solve a three-digit by one-digit division problem was a mere 26% in 2013. Typically, such problems are taught in Class 3 or 4. The proportion of Class 5 children who could read a Class 2 text was just 47%. There's no evidence that things get better as less and less students move up the ladder.

One reason for this neglect of learning is lack of trained teachers. A

large proportion of teachers are either not fully trained or trained in dubious teacher-education colleges set up for profit under government's drive to meet the Right to Education requirements. Nearly half the college teachers are contractual or temporary and paid a fifth of what permanent lecturers get.

Only about 2% of youths have technical training, and this is not changing much over the years. Despite skill development initiatives targeting 500 million people by 2022, the PPP model flounders.

Only 17% of youth in the 18-23 age group join higher education, most of them end up with arts or humanities degrees that are mere job-market markers. The same happens in technical or vocational

% of students of	Class 3 to 5 who can		Class 6 to 8 who can	
	Read Class 1 text	Do Subtraction	Read Class 3 text	Do Division
Andhra	68	58	72	52
Assam	46	30	53	19
Bihar	48	41	66	55
Chhattisgarh	54	28	72	27
Gujarat	59	32	68	27
Haryana	73	63	79	58
Jharkhand	45	35	61	43
Karnataka	57	45	63	37
Kerala	78	61	88	56
MP	38	22	51	25
Maharashtra	70	32	73	29
Odisha	56	38	63	35
Punjab	72	67	82	62
Rajasthan	53	37	70	43
Tamil Nadu	50	39	57	31
Uttar Pradesh	48	36	63	38
West Bengal	59	44	66	34
India	**55**	**40**	**66**	**39**

streams. Although a multi-pronged strategy is needed to change this stasis, one key driver could be increased government spending to spread education throughout the country and also push for quality.

This would entail better basic facilities - from girls' toilets to science labs, more scholarships, better access to IT, and rigorous teachers' training with better salaries and work conditions. Now, about 4% GDP is spent on education and training, two-thirds of it by states, the rest by the centre. This must be raised to the global standard of at least 6%. Is any party promising this? ❑

Student's last words Challengeanation

Marina Keegan died before she turned 23. What she left behind will make you cry

We're so young. We're so young. We're twenty-two years old. We have so much time," wrote Yale student Marina Keegan in her essay The Opposite of Loneliness as she was graduating from college. It was part of the graduation issue of the Yale newspaper and quickly went viral. It is a long essay, in which Keegan analyses the feelings of well-being and safety that being in college gave her.

But Keegan was wrong. She did not have that much time. In fact, a mere five days after her graduation, as she was being driven to her father's 55th birthday party by her boyfriend, she died. Her boyfriend, who was neither drunk nor speeding, went to sleep at the wheel, and while he escaped unscathed, Keegan was dead. The essay is now being collected along with some of her other writing by her family, teachers and friends. Most of the material in the book will come from her laptop, which her mother Tracy recovered from the wreck of the car in which she died. The book has already gathered wide attention, with Nicholas Kristof, the widely respected columnist, reviewing it for The New York Times' Sunday Review.

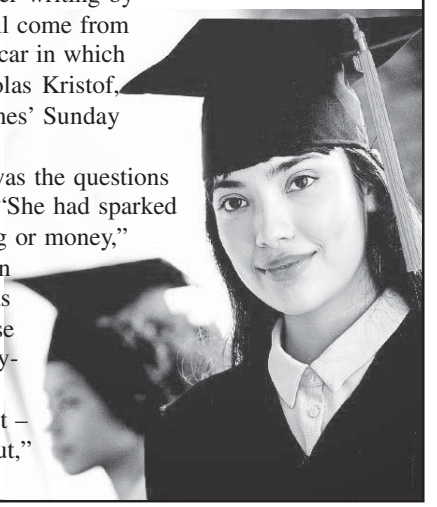

One of the most remarkable things about Keegan's essay was the questions she raised about elite students opting for jobs with success built in. "She had sparked a national conversation about whether graduates should seek meaning or money," as Kristof puts it. It was a topic that bothered her, and she often returned to the quest for ways of "living with meaning". "Keegan was right to prod us all to reflect on what we seek from life, to ask these questions, to recognize the importance of passions as well as pay-checks – even if there are no easy answers."

"This search for purpose in life is an elemental human quest – yet one we tend to put off. And we never know when time will run out," says Kristof.

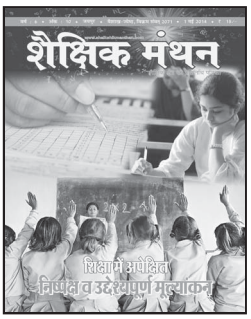

धर्म का अभिप्राय है मानवोचित आचरण संहिता। यह आचरण संहिता ही नैतिकता है और इस नैतिकता के मापदंड ही नैतिक मूल्य हैं। नैतिक मूल्यों के अभाव में कोई भी व्यक्ति, समाज या देश निश्चित रूप से पतनोन्मुख हो जायेगा। नैतिक मूल्य मनुष्य के विवेक में स्थित, आंतरिक व अंतः स्फूर्त तत्त्व हैं जो व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास में आधार का कार्य करते हैं। नैतिक मूल्यों का विस्तार व्यक्ति से विश्व तक, जीवन के सभी क्षेत्रों में होता है, व्यक्ति-परिवार, समुदाय, समाज, राष्ट्र से मानवता तक नैतिक मूल्यों की यात्रा होती है। नैतिक मूल्यों के महत्त्व को व्यक्ति समाज राष्ट्र व विश्व की दृष्टियों से देखा समझा जा सकता है।

नैतिक मूल्य मनुष्यता की पहचान है

❑ **सोनी वार्ष्णेय**

असंतोष, अलगाव, उपद्रव, आंदोलन, असमानता, असामंजस्य, अराजकता, आदर्श विहीनता, अन्याय, अत्याचार, अपमान, असफलता अवसाद, अस्थिरता, अनिश्चितता, संघर्ष, हिंसा... यही सब घेरे हुए हैं आज हमारे जीवन को।

व्यक्ति में एवं समाज में साम्प्रदायिकता, जातीयता, भाषावाद, क्षेत्रीयतावाद, हिंसा की संकीर्ण कुत्सित भावनाओं व समस्याओं के मूल में उत्तरदायी कारण है मनुष्य का नैतिक और चारित्रिक पतन अर्थात नैतिक मूल्यों का क्षय एवं अवमूल्यन।

नैतिकता का सम्बंध मानवीय अभिवृत्ति से है, इसलिए शिक्षा से इसका महत्त्वपूर्ण अभिन्न व अटूट सम्बंध है, कौशलों व दक्षताओं की अपेक्षा अभिवृत्ति-मूलक प्रवृत्तियों के विकास में पर्यावरणीय घटकों का विशेष योगदान होता है। यदि बच्चों के परिवेश में नैतिकता के तत्त्व पर्याप्त रूप से उपलब्ध नहीं हैं तो परिवेश में जिन तत्त्वों की प्रधानता होगी वे जीवन का अंश बन जायेंगे। इसीलिए कहा जाता है कि मूल्य पढ़ायें नहीं जाते, अधिग्रहीत किये जाते हैं।

देश की सबसे बड़ी शैक्षिक संस्था- राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद के द्वारा उन मूल्यों की एक सूची तैयार की गयी है जो व्यक्ति में नैतिक मूल्यों के परिचायक हो सकते हैं। इस सूची में 84 मूल्यों को सम्मिलित किया गया है।

वास्तव में नैतिक गुणों की कोई एक पूर्ण सूची तैयार नहीं की जा सकती, तथापि संक्षेप में हम इतना कह सकते हैं कि हम उन गुणों को नैतिक कह सकते हैं जो व्यक्ति के स्वयं के, सर्वांगीण विकास और कल्याण में योगदान देने के साथ-साथ किसी अन्य के विकास और कल्याण में किसी प्रकार की बाधा न पहुँचाए। विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि नैतिक मूल्यों की जननी नैतिकता सद्गुणों का समन्वय मात्र नहीं है, अपितु यह एक व्यापक गुण है जिसका प्रभाव मनुष्य के समस्त क्रियाकलापों पर होता है और सम्पूर्ण व्यक्तित्व इससे प्रभावित होता है, वास्तव में नैतिक मूल्य नितांत वैयक्तिक होते हैं। अपने प्रस्फुटन

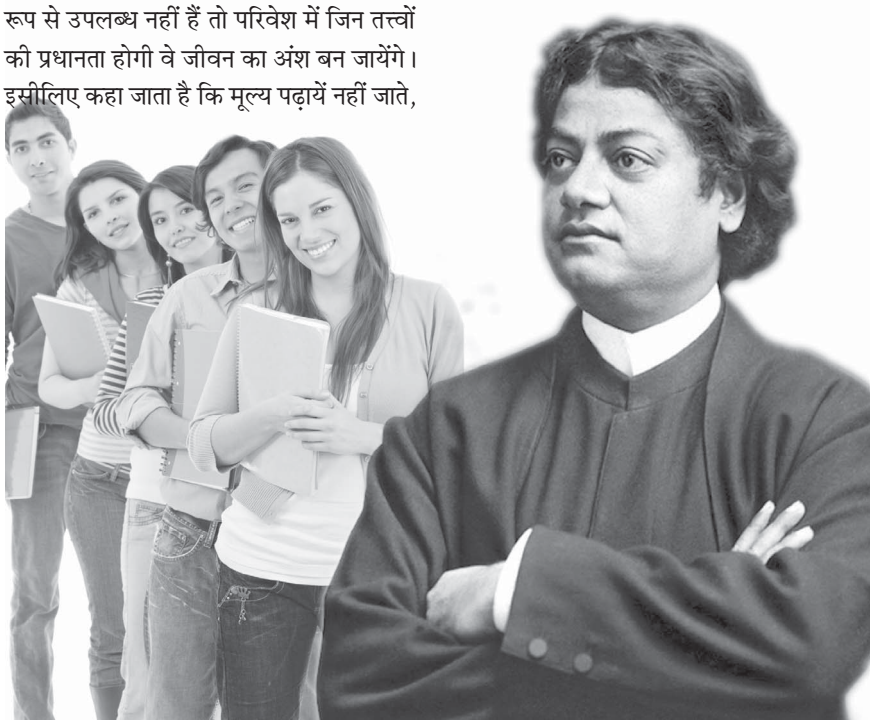

उन्नयन व क्रियान्वय से यह क्रमश: अन्तर्व्यक्तिक/ सामाजिक व सार्वभौमिक होते जाते हैं।

एक ही समाज में विभिन्न कालों में नैतिक संहिता भी बदल जाती है। नैतिकता/ नैतिक मूल्य वास्तव में ऐसी सामाजिक अवधारणा है जिसका मूल्यांकन किया जा सकता है। यह कर्तय की आंतरिक भावना है और उन आचरण के प्रतिमानों का समन्वित रूप है जिसके आधार पर सत्य असत्य, अच्छा-बुरा, उचित-अनुचित का निर्णय किया जा सकता है और यह विवेक के बल से संचालित होती है।

आधुनिक जीवन में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता, महत्त्व अनिवार्यता व अपरिहार्यता को इस बात से सरलता व संक्षिप्तता में समझा जा सकता है कि संसार के दार्शनिकों, समाजशास्त्रियों, मनोवैज्ञानिकों शिक्षा शास्त्रियों, नीति शास्त्रियों ने नैतिकता को मानव के लिए एक आवश्यक गुण माना है।

खेद का विषय है कि हमारी शिक्षा केवल बौद्धिक विकास पर ध्यान देती है। हमारी शिक्षा शिक्षार्थी में बोध जाग्रत नहीं करती वह जिज्ञासा नहीं जगाती जो स्वयं सत्य को खोजने के लिए प्रेरित करे और आत्मज्ञान की ओर ले जाये, सही शिक्षा वही हो सकती है जो शिक्षार्थी में नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को विकसित कर सके।

नैतिकता मनुष्य के सम्यक जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक है। इसके अभाव में मानव का सामूहिक जीवन कठिन हो जाता है। नैतिकता से उत्पन्न नैतिक मूल्य मानव की ही विशेषता है। नैतिक मूल्य ही व्यक्ति को मानव होने की श्रेणी प्रदान करते हैं। इनके आधार पर ही मनुष्य सामाजिक जानवर से ऊपर उठ कर नैतिक अथवा मानवीय प्राणी कहलाता है। अच्छा-बुरा, सही गलत के मापदण्ड पर ही व्यक्ति, वस्तु, व्यवहार व घटना की परख की जाती है। ये मानदंड ही मूल्य कहलाते हैं और भारतीय परम्परा में ये मूल्य ही धर्म कहलाता है अर्थात 'धर्म' उन शाश्वत मूल्यों का नाम है जिनकी मन, वचन, कर्म की सत्य अभिव्यक्ति से ही मनुष्य-मनुष्य कहलाता है अन्यथा उसमें और पशु में भला क्या अंतर? धर्म का अभिप्राय है मानवोचित आचरण संहिता। यह आचरण संहिता ही नैतिकता है और इस नैतिकता के मापदंड ही नैतिक मूल्य हैं। नैतिक मूल्यों के अभाव में कोई भी व्यक्ति, समाज या देश निश्चित रूप से पतनोन्मुख हो जायेगा। नैतिक मूल्य मनुष्य के विवेक में स्थित, आंतरिक व अंत: स्फूर्त तत्त्व हैं जो व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास में आधार का कार्य करते हैं।

व्यक्तिगत	अंत: व्यक्तिगत	सार्वभौमिक
स्वास्थ्य के प्रति जागरुकता	सहिष्णुता	सत्य निष्ठा
दैहिक शुचिता	सेवा भाव	सामाजिक न्याय
आत्मसम्मान	ईमानदारी	अहिंसा
आत्म निर्भरता	धैर्य	मानववाद
वचनबद्धता	शिष्टता	एकात्म भाव
अनुशासन प्रियता	निष्पक्षता	विश्व बंधुत्व की भावना
श्रमशीलता	आतिथेय	स्वातंत्र्य-प्रेम
सम्यक वाणी	उदारता	सार्वभौम प्रेम
सम्यक कर्म	न्यायशीलता	समता भाव
सात्विक खान-पान	अनुग्रह भाव	दया
सुरुचि	सहयोग भावना	पर्यावरण जागरुकता
सम्यक विचार	दानशीलता	करुणा
आशा कारिता	निष्कपटता	सर्वधर्म समभाव
विश्वसनीयता	सहानुभूति	वैज्ञानिक आस्था
भविष्य के प्रति जागरुक	बड़ों का सम्मान	लौकिकवाद
निर्भयता व साहस	सार्वजनिक जीवन में शुद्धता	सर्व कल्याण की भावना
गत्यात्मकता	कर्तव्य परायणता	शांति-प्रियता
धैर्यशीलता	मैत्री भाव	
आत्मोन्मुखता	टीम भावना	
समयबद्धता	नागरिक जागरुकता	
	भद्रता	

नैतिक मूल्यों का विस्तार व्यक्ति से विश्व तक, जीवन के सभी क्षेत्रों में होता है, व्यक्ति-परिवार, समुदाय, समाज, राष्ट्र से मानवता तक नैतिक मूल्यों की यात्रा होती है। नैतिक मूल्यों के महत्त्व को व्यक्ति समाज राष्ट्र व विश्व की दृष्टियों से देखा समझा जा सकता है। समाजिक जीवन में तेजी से हो रहे परिवर्तन के कारण उत्पन्न समस्याओं की चुनौतियों से निपटने के लिए और नवीन व प्राचीन के मध्य स्वस्थ अंत: क्रिया को सम्भव बनाने में नैतिक मूल्य सेतु-हेतु का कार्य करते हैं। नैतिक मूल्यों के कारण ही समाज में संगठनकारी शक्तियां व प्रक्रिया गति पाती हैं और विघटनकारी शक्तियों का क्षय होता है।

नैतिक समाज सामाजिक जीवन को सुगम बनाती है और समाज में अप्रत्यक्ष रूप से नियंत्रण रखती है। समाज राष्ट्र में एकीकरण और अस्मिता की रक्षा नैतिकता के अभाव में नहीं हो सकती है। विश्व बंधुत्व की भावना, मानवतावाद, समता भाव, प्रेम और त्याग जैसे नैतिक गुणों के अभाव में विश्व शांति, अंतर्राष्ट्रीय सहयोग, मैत्री आदि की कल्पना भी नहीं की जा सकती। ❑

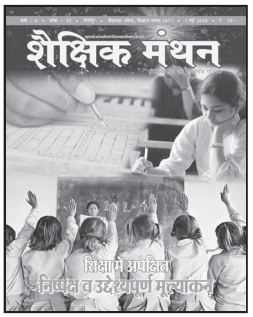

करे कोई, भरे कोई

राजस्थान विश्वविद्यालय में उत्तरपुस्तिकाओं की जांच में सामने आई लापरवाही उन गैरजिम्मेदार शिक्षकों को बेनकाब करने को काफी है, जो कॉपियों की जांच के नाम पर खानापूर्ति कर परीक्षार्थियों के भविष्य से खिलवाड़ करने में लगे हैं। यह लापरवाही तो सूचना के अधिकार (आरटीआई) के तहत प्राप्त जानकारी में उजागर हो गई। इस बात की क्या गारंटी है कि राजस्थान विश्वविद्यालय ही नहीं बल्कि दूसरे विश्वविद्यालयों में भी ऐसी लापरवाही नहीं होती होगी। बगैर उत्तरपुस्तिका की जांच किए शून्य अंक दर्शाने के मामले और भी हो सकते हैं। जब शिक्षक ही ऐसा गैरजिम्मेदाराना बर्ताव करने लगे तो फिर बच्चे अपने बेहतर भविष्य की उम्मीद भला किससे करें?

प्रतियोगिता के इस दौर में किसी भी परीक्षार्थी के लिए एक-एक अंक का खासा महत्व है। अंदाजा लगाइए, अपेक्षा के अनुरूप परिणाम मिलने की जगह भविष्य बर्बाद होने की सूचना पर किसी परीक्षार्थी पर क्या गुजरती होगी? लापरवाह शिक्षक खुद की संतानों को इनकी जगह रखकर देखें तो शायद उनको अपराध बोध हो। हर साल विश्वविद्यालयों में सैकड़ों परीक्षार्थी, परीक्षा परिणाम आने के बाद अपने अंकों को लेकर असंतुष्ट नजर आते हैं। किसी भी विश्वविद्यालय में नतीजे घोषित होने के बाद पुनर्मूल्यांकन के लिए आवेदन करने वालों की कतार को देखकर इस असंतोष का अंदाजा लगाया जा सकता है। पुनर्मूल्यांकन में बढ़े अंक भी इस बात का संकेत देते हैं कि जांच का काम गंभीरता से नहीं होता। हो भी कैसे, जब एक-एक शिक्षक पर कॉपियाँ जांचने का भारी दबाव हो? शिक्षकों को विश्वविद्यालय के बजाए प्रतियोगी परीक्षाएं लेने वाले संस्थानों से जांच का पारिश्रमिक ज्यादा मिलता हो? इससे भी ज्यादा यह कि लापरवाह शिक्षकों के खिलाफ कभी सख्ती करने का कोई उदाहरण ही सामने नहीं हो?

राजस्थान विश्वविद्यालय का जो मामला सामने आया है उसमें तो उत्तरपुस्तिकाओं की समूची जांच प्रक्रिया ही संदेह के घेरे में आ

प्रतियोगिता के इस दौर में किसी भी परीक्षार्थी के लिए एक-एक अंक का खासा महत्व है। अंदाजा लगाइए, अपेक्षा के अनुरूप परिणाम मिलने की जगह भविष्य बर्बाद होने की सूचना पर किसी परीक्षार्थी पर क्या गुजरती होगी? लापरवाह शिक्षक खुद की संतानों को इनकी जगह रखकर देखें तो शायद उनको अपराध बोध हो। हर साल विश्वविद्यालयों में सैकड़ों परीक्षार्थी, परीक्षा परिणाम आने के बाद अपने अंकों को लेकर असंतुष्ट नजर आते हैं। किसी भी विश्वविद्यालय में नतीजे घोषित होने के बाद पुनर्मूल्यांकन के लिए आवेदन करने वालों की कतार को देखकर इस असंतोष का अंदाजा लगाया जा सकता है।

गई है। यह तो अच्छा हुआ कि छात्र ने आरटीआई लगाकर कॉपी की हकीकत जान ली। लेकिन आम विद्यार्थी तो यह समझ कर चुप्पी साध लेता है कि शायद मेहनत के बाद भी किस्मत ने उसका साथ नहीं दिया। जब छात्र व शिक्षक के बीच विश्वास का 'सेतु' ही टूटता नजर आए तो समूची परीक्षा प्रणाली पर ही सवालिया निशान लग जाता है।

हैरत की बात यह है कि आरटीआई के जरिए अपनी उत्तरपुस्तिका की जाँच की हकीकत जांचने के बाद भी शिक्षकों की सुविधा के लिए बने लचर कानून-कायदों ने छात्रों के भविष्य से खिलवाड़ करने का 'पुख्ता' इंतजाम कर रखा है। न कहीं अपील की व्यवस्था है और न ही दोषी शिक्षक को दंड का प्रावधान। किसी का भविष्य बिगड़ता हो तो बिगड़े इनकी बला से।

हर साल परीक्षा परिणामों के बाद कुंठित विद्यार्थी कई बार आत्महत्या जैसा घातक कदम भी उठाने को मजबूर हो जाते हैं। गैर जिम्मेदारी से कॉपियों की जांच करने वाले चंद शिक्षक समूचे शिक्षक समुदाय को बदनाम कर देते हैं जो अपनी जिम्मेदारी का बखूबी निर्वाह करते हैं। ऐसे में विश्वविद्यालयों की सिंडीकेट व अन्य प्रबंध निकायों को भी उत्तरपुस्तिकाओं की जांच में इस 'पोल' पर गौर करना होगा। यह भी जरूरी है कि प्रत्येक छात्र को इस बात का हक दिया जाए कि वह परिणाम घोषित होने के बाद न केवल अपनी कॉपियों का अवलोकन कर सके बल्कि असंतुष्ट होने पर उसे राहत देने का प्रयास भी हो। विश्वविद्यालय प्रशासन ऐसे मामलों में चुप्पी साध कर दोषियों को बचाने की कोशिश करे तो न्यायपालिका को दखल कर सख्त कानून बनाने की पहल करनी होगी। जब तक ऐसे शिक्षकों की सेवा बर्खास्तगी जैसा सख्त कदम नहीं उठाया जाएगा, होनहार बच्चे कुंठा का शिकार होते रहेंगे। ❑

सौजन्य : राजस्थान पत्रिका

कॉपी में जांच का निशान तक नहीं और अंक दिए शून्य

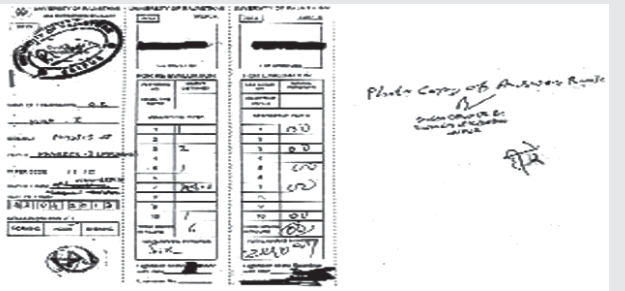

राजस्थान विश्वविद्यालय में उत्तर-पुस्तिका की जांच में लापरवाही का एक अनूठा मामला सामने आया है। एक शिक्षक ने बिना कॉपी जांचे ही उस पर शून्य अंक देकर अपने काम की इतिश्री कर ली। बीएससी प्रथम वर्ष के नियमित छात्र दीपचंद के साथ एसा हुआ तो उसने आरटीआई दाखिल कर जांची हुई उत्तर-पुस्तिका की प्रति मांगी। इसके बाद यह लापरवाही उजागर हुई।

कॉपी देख हुआ दंग

दीपचंद फिजिक्स का छात्र है। उसे फिजिक्स 'मैकेनिक्स' के पेपर में शून्य अंक मिले। उसने पुनर्मूल्यांकन करवाया तो 6 अंक आए। पेपर 33 नंबर का था। दीपचंद आश्वस्त था कि उसका पेपर अच्छा हुआ था और उसे कम से 15 नंबर तो मिलने ही चाहिए थे। इसी आत्मविश्वास पर उसने आरटीआई के तहत अपनी कॉपी देखी तो वह दंग रह गया। कॉपी पर कहीं भी उत्तर जांचने के निशान नहीं मिले।

2 विषय, 2 दावे

दीपचंद ने गणित की उत्तरपुस्तिका भी आरटीआई में ली। उसका दावा है, इसमें सही प्रश्नों को भी गलत बताकर कम अंक दिए गए हैं।

मैकेनिक्स के पेपर को लेकर छात्र का दावा है, किसी भी अच्छे प्रोफेसर से जांच कराई जाए तो उसे कम से कम 15 अंक तो मिलेंगे ही।

जवाब मांगते 3 सवाल- 1. यह लापरवाही कहीं जल्दबाजी व दबाव का नतीजा तो नहीं? क्योंकि पिछले सत्र में कई शिक्षकों के कॉपी जांचने से मना करने पर कॉलेज शिक्षा निदेशालय को दखल देना पड़ा था। 2. ऐसे कितने शिक्षकों पर कार्रवाई हुई जिनकी मनमानी से परिणाम देरी से जारी हुए या पुनर्मूल्यांकन जांच में भारी अंतर आने पर उन्हें ब्लैक लिस्टेड किया गया। 3. विवि का तर्क कितना सही कि अंदर नंबर न देने का नियम है? कॉपी में जांच के सही गलत का निशान तो होना चाहिए, जैसा दीपचंद की गणित की कॉपी में है।

यह कैसा अधिकार

विवि ने आरटीआई के तहत कॉपी दिखाना तो शुरू कर दिया, पर छात्रों की परेशानी कम नहीं हुई। उन्हें पुनर्मूल्यांकन के बाद आरटीआई से मिली कॉपी की दोबारा जांच का अधिकार नहीं है। विवि गलत कॉपी जांचने वाले शिक्षक पर कार्रवाई नहीं करता है।

डॉ. पी. एल. रैगर, परीक्षा नियंत्रक, राज. वि.वि. के अनुसार यह मामला देखना पड़ेगा। कुछ विश्वविद्यालयों में शिक्षक उत्तरपुस्तिका जांचने के दौरान हर उत्तर पर नंबर नहीं देते। संभवत: यह कॉपी किसी ऐसे ही शिक्षक के पास गई होगी। पीड़ित छात्र के अनुसार मेरा पेपर अच्छा हुआ था। अब समझ आ गया कि कॉपी बिना जांचे ही मेरी सालभर की मेहनत पर पानी फेर दिया गया। स्थिति स्पष्ट होने के बावजूद मेरे अंक नहीं बढ़ाए जा रहे।

Tried, tested and failed

❑ **Sundar Sarukkai**

Two tough months are ahead. No, I am not referring to the oncoming summer. Not even to the elections, although the heat generated by the elections seems to be rivalling that of nature. However warm the rhetoric of the elections is going to be, I am actually referring to the annual, national stress-creator called "Exams". The country is in the midst of exams, all kinds of exams. Millions of students are writing all kinds of stuff on paper; dreams are going to blossom or die in the next few months for these millions.

The state of examinations today is an indicator of the kind of nation we have become. As is well known, exams are not only stressful for the students but more so for parents, particularly mothers. Countless mothers pamper their children during this time, including feeding them if necessary! No wonder some believe that it is the dreams of mothers, more than those of their children, that are really driving the state of education in India today.

It is sad, really sad, to see what we have done to bright young minds and grown up adults, both of whom lose the basic sense of their selves in the face of exams. Anybody with aspirations, and with enough financial support, writes not just one exam but many. Days are measured — not by coffee spoons — but by the number of coaching classes for the different exams that the students go to.

I know parents who break down during this time. I am absolutely amazed that the same questions asked decades ago are still so important today: will my child get into medical or engineering college? Will s/he pass the IIT exam? Along with these anxieties, another constant one: I hope my child does not want to do arts!

If I were to be a little more suspicious, I would think that there is a great conspiracy by many Parents of India along with the Government of India to make sure that young kids do not take to arts and humanities. Ironically, the examination system is intimidating to such students but at the same time it also pushes more students towards these disciplines. It is this fundamental flaw of the exam system that makes exam season a bigger tamasha than the election season. At least the latter comes only once in five years.

There are at least three major flaws of the exam system across India. First is the exam itself: the content, what it hopes to test and how the test is administered. Second is the evaluation of these exams and the method of evaluation by overworked teachers having to grade thousands of exam papers. Third is the obsession of entrance tests with mathematics, particularly the emphasis on high speed calculation in competitive exams. While these may seem to be flaws of only the exam system, I would suggest that they exemplify a deeper disease pervading our nation.

From our schools to our colleges, students have stopped reading texts. The fascination with guidebooks as the primary source of all knowledge continues. Today, I am told, guide books sell in lakhs and are one of the most profitable resources in publishing. Given the unceasing march of these books, many school exam systems have removed any

The state of examinations today is an indicator of the kind of nation we have become. As is well known, exams are not only stressful for the students but more so for parents, particularly mothers. Countless mothers pamper their children during this time, including feeding them if necessary! No wonder some believe that it is the dreams of mothers, more than those of their children, that are really driving the state of education in India today. It is sad, really sad, to see what we have done to bright young minds and grown up adults, both of whom lose the basic sense of their selves in the face of exams.

pretence of having textbooks for students to read. Exams are already anticipated and performed by the students through these guides and tutorial classes that are meant not for learning but only for writing exams.

The fact that such practices not only encourage but also sustain the culture of 'mugging' is one of the oldest stereotypes of education in India but we don't seem to have made any dent in its progress. Part of the reason is the centralisation of exams and the need to grade thousands of papers. When machine grading replaced human ones, the exam system in some cases replaced reproduction of notes by the moronic MCQs (multiple choice questions).

Competitive exams add another dimension to this tamasha. Mimicking exams like GRE, many of these entrance exams introduced questions in mathematics. So if you want to do MBA, you not only have to solve some inane arithmetic and geometry questions but you also have to do them at great speed. What does solving 100 basic mathematical questions in 30 minutes tell us about a student? The belief that logical or critical thinking skills are tested through such tests is another myth that we don't even want to question. The enormous effect this practice has had on students who do not do well in mathematics should not be underestimated.

This myth about the apparent importance of speed solving of mathematical problems as an indicator of something (haven't figured what that is yet!) is based on certain myths about mathematics itself. Examiners are well aware that most often the way to solve these problems so fast is to be aware of specific tricks to solve them. It does not have much to do with thinking about these problems since there is no time given for thinking. This is another way of reproduction without thought and has now become the bane of students who do not solve these problems so rapidly. It has also led to skewed representation of students and has served to exclude specific communities and groups in large numbers.

From our schools to our colleges, students have stopped reading texts. The fascination with guidebooks as the primary source of all knowledge continues. Today, I am told, guide books sell in lakhs and are one of the most profitable resources in publishing.

So my hope this sweltering summer is just this: I want a party that will first reform our examination system. I want an exam system if we need one in the first place to test whether students can write two lines of poetry, or see a colour in the world around them, or show a capacity for reflective thinking about issues that surround them instead of testing them in their skills of mugging up texts or learning tricks to solving meaningless puzzles. If a political party is willing to do this, I am ready to even wear one of those funny looking caps. ❑

(The author is director of the Manipal Centre for Philosophy and Humanities, Manipal University)

भारतीय विज्ञान : कल आज और कल

महानतम वैज्ञानिक आइंस्टाइन ने लिखा है कि शून्य के आविष्कार के लिये हम भारतीयों के ऋणी हैं क्योंकि इसके अभाव में वर्तमान युग के महानतम वैज्ञानिक अनुसन्धान हो ही नहीं सकते थे। आज भारत का नाम विज्ञान के क्षेत्र में अति प्रगतिशील देशों की श्रेणी में आता है। 1991 में ही भारत ने 'परम' सुपरकम्प्यूटर का निर्माण कर विश्व में अपनी धाक जमा ली । इस कम्प्यूटर ने उसे परमाणु अस्त्रों के निर्माण, अंतरिक्ष की शोध एवं मौसम की भविष्यवाणी के क्षेत्रों में एक शक्ति के रूप में स्थापित कर दिया। डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के कार्यों ने उसे अत्याधुनिक प्रक्षेपास्त्रों के निर्माण में सक्षम बना दिया। भविष्य में भारत अंतरिक्ष शोध एवं नवीन औषधियों के विरचन में निश्चित रूप से और अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त करेगा। अपेक्षित है कि वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रोतों एवं जल प्रबंधन के क्षेत्रों में भी भारतीय वैज्ञानिक और अधिक रुचि लें ताकि कल भारत पुनः विश्व गुरु के पद पर आसीन हो सके।

❑ **डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल**

विज्ञान तो सार्वदेशिक एवं सार्वजनीन है और इसीलिये ''भारतीय विज्ञान '' पद का कोई अधिक अर्थ नहीं रह जाता, फिर भी हम कह सकते हैं कि यह इस बात को अभिव्यक्त करता है कि भारत में व्यवस्थित विज्ञान कब से प्रारम्भ हुआ, आज उसकी क्या स्थिति है और आगे उसकी दिशा क्या हो सकती है। परंतु इसके भी पहले यह समझ लेना आवश्यक है कि विज्ञान वस्तुतः है क्या। कहा जा सकता है कि ब्रह्मांड को तथा उसे संचालित करने वाले प्राकृतिक क्रिया कलापों को समझने का प्रयत्न करना एवं इस ज्ञान का उपयोग अंततः मानवता के हित में करना ही विज्ञान है। सिद्ध हो चुका है कालांतर में यह विज्ञान एक महान शक्ति बन कर उमरा है। भारत के संबंध में तो नोबेल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक श्री चंद्रशेखर वेंकटरमण ने यहां तक कहा है कि '' इस देश की सभी समस्याओं का हल है केवल विज्ञान, अधिक विज्ञान और अधिक विज्ञान''।

भारत में विज्ञान कब प्रारम्भ हुआ–यह बताना एक दुष्कर कार्य है परंतु लगभग छः हजार वर्ष पूर्व रचित (एक अनुमान के अनुसार) ऋग्वेद में तांबा, चांदी, सोना, टिन, लेड (सीसा) एवं लोहा, इन छः धातुओं के कतिपय भौतिक तथा रसायनिक गुणों का उल्लेख मिलता है। स्पष्ट है कि इसके भी पहले इनके सांगोपांग अध्ययन का प्रयत्न अवश्य ही किया गाया होगा। इस काल के बाद तो विज्ञान के क्षेत्र में इस देश में शोध की गति निश्चित रूपसे तीव्र रही होगी। प्रख्यात वैज्ञानिक, चिंतक एवं पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी. जे. अब्दुल कलाम ने अपनी पुस्तक ''तेजस्वी मन'' में लिखा है कि ''प्राचीन भारत ज्ञान से परिपूर्ण था। प्राचीन संस्कृत साहित्य वैज्ञानिक सिद्धांतों और विधियों का भंडार था। उसमें विशेषकर गणित, नक्षत्र विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान, रसायन विज्ञान, यहां तक कि विमान कैसे बनायें तक के विषयों पर अद्‌भुत जानकारी मिलती हैं।''

वर्ष 662 ईस्वी में जन्में सीरियाई वैज्ञानिक मांक सेवेरस सी बोख्त ने भी लिखा कि '' नक्षत्र विज्ञान और गणित में हिंदुओं द्वारा की गई खोजें ग्रीकों और बेबिलोनियनों की खोजों से अधिक क्रांतिकारी हैं। वे इस क्षेत्र में अग्रणी हैं। '' यहूदी विश्वकोष से जानकारी मिलती है कि वर्ष 1114 ईस्वी में जन्मे आस्कर द्वितीय ने ही पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण सिद्धांत का अनुसंधान कर लिया था। ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद एवं छान्दोग्य उपनिषद में धातुओं से संबंधित उपयोगी ज्ञान संग्रहीत हैं। इस्वीपूर्व तीसरी शताब्दी में लिखे गये कौटिल्य के अर्थशास्त्र में पहले बतायी गयी छः धातुओं के अयस्कों, खनिजों, उनसे धातुओं के निष्कर्षण तथा मिश्र धातुओं (एलॉय) के विरचन की विस्तृत जानकारी उपलब्ध है। प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व में रचित चरक संहिता एवं इसके भी पांच सौ वर्ष पूर्व की सुश्रुत संहिता में भी यह जानकारी मिलती है। इसके साथ ही धातु ऑक्साइडों (भस्मों) तथा सल्फाइडों (मक्षिकों) के विरचन की विधियां तथा उनके गुणधर्म भी इन ग्रंथों में विवेचित हैं। रासायनिक प्रक्रियायें यथा–द्रवणन, संघनन, आसवन, प्रक्षालन आदि भी समुचित विस्तार से गयी हैं। दृष्टव्य है कि ये दोनों ही ग्रंथ अरबी में भी अनुदित हुये और अंततः यूनानी चिकित्सा पद्धति के आधार बने। चरक संहिता में लगभग एक लाख वनस्पतियों के औषधीय गुण एवं सुश्रुत संहिता में शल्य चिकित्सा की चमत्कारी विधियों का सांगोपांग वर्णन है।

डाल्टन के बहुत पहले, ईसा के जन्म से 600 वर्ष पूर्व ही कणाद ने अपने वैशेषिक सूत्र में परमाणु संरचना एवं उनकी प्रकृति की ऐसी जानकारी समावेशित कर दी थी जो इस क्षेत्र के आधुनिक ज्ञान के संगत है जबकि इसी काल में जैन दार्शनिकों ने कतिपय प्रकार की रासायनिक बंधताओं की सटीक व्याख्या की है। ईस्वी वर्ष 500 के काल में आर्यभट्ट ने ही सर्वप्रथम इस मत का प्रतिपादन किया कि पृथ्वी ही सूर्य के चारों ओर घूमती है। उसी ने सूर्य एवं चंद्र ग्रहण की भी सटीक व्याख्या की और शून्य का अविष्कार भी ।

यद्यपि सही अर्थों में '' शून्य सिद्धांत'' का जनक वर्ष 598 ईस्वी में जन्मे ब्रह्मगुप्त को माना जाता है। आर्यभट्ट ने शून्य के लिये ''ख'' का प्रयोग किया। शून्य के लिये चिह्न के रूप में छोटे से वृत्त (0) का उपयोग विश्व को भास्कर प्रथम (जन्म वर्ष -680 ईस्वी) ने सिखाया। बीसवीं शताब्दी के महानतम वैज्ञानिक आइंस्टाइन ने लिखा है कि शून्य के आविष्कार के लिये हम भारतीयों के ऋणी हैं क्योंकि इसके अभाव में वर्तमान युग के महानतम वैज्ञानिक अनुसन्धान हो ही नहीं सकते थे।

लगभग 14वीं शताब्दी में रचित अगस्त्य संहिता में विद्युत ऊर्जा का मित्र ऊर्जा के नाम से स्पष्ट उल्लेख है जबकि आधुनिक विश्व इसकी खोज का श्रेय वर्ष 1706 ईस्वी में जन्में बेंजामिन फ्रैंकलिन को देता है।

आधुनिक भारत में विज्ञान (पाश्चात्य) का प्रारम्भ आज के बांग्ला देश में जन्में श्री प्रफुल्ल चंद्र राय के साथ माना जा सकता है जिन्होंने 1892 में बंगाल केमिकल एंड फार्मास्यूटिकल इंडस्ट्री की स्थापना की। अपने जीवनकाल में उन्होंने रसायनशास्त्र में 120 शोधपत्र प्रकाशित किये और मरक्यूरस एवं अमोनियम नाइट्राटर यौगिकों का संश्लेषण कर विश्व को चमत्कृत कर दिया। उनका नाम प्रसिद्ध ग्रंथ "History of Hindu Chemistry" के लेखक के रूप में भी जाना जाता है।

श्री राय के काल में ही श्री जगदीश चंद्र बोस ने भी विश्व को भारत की मेघा से परिचित कराया। उन्होंने मुख्यत: विभिन्न प्रकार की उत्तेजनाओं के प्रति वनस्पति जगत की संवेदनशीलता के अध्ययन से नाम कमाया । यद्यपि मार्कोनी को बेतार के तार का अविष्कारक माना जाता रहा है, परंतु अब स्वीकार किया जाने लगा है कि यह श्रेय भी वस्तुत: उन्हें ही मिलना चाहिये। 1930 में श्री चंद्रशेखर वेंकटरमण ने स्पेक्ट्रमिकी की एक नवीन विधि का

आविष्कार कर भारत को प्रथम नोबेल पुरस्कार दिलाया। आज तक इस तकनीक (रमन स्पेक्ट्रमिकी) से लगभग 3000 अणुओं की संरचना ज्ञात की जा चुकी है। भौतिक शास्त्र में ही कार्य करते हुये श्री सत्येन्द्र नाथ बोस ने बोस-आइन्सटाइन statistics के विकास में सहयोग दिया। उनके कार्य के महत्त्व को पहचान कर एक विशिष्ट के मूल कणों का नाम ही बोसॉन रख दिया गया। 1970 के दशक में श्री स्वामीनाथन ने कृषि विज्ञान में अपने उल्लेखनीय कार्यों से भारत की आसन्न दुर्मिक्ष से रक्षा की।

डा. हरगोबिंद खुराना, डॉ. सुब्रमण्यम, चंद्रशेखर एवं डॉ. वेंकटरमण रामकृष्णन, तीनों ही यद्यपि अनिवासी भारतीय हैं, परंतु फिर भी कहा जा सकता है कि उनके अनुसंधान से भारत को गौरव प्राप्त हुआ। डॉ. खुराना को जीन इंजीनियरी का जनक कहा जाता है और इस कार्य के लिये उन्हें 1968 में नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया। डॉ. चंद्रशेखर को 1983 में नक्षत्र विज्ञान के क्षेत्र में श्याम विवर संबंधी अनुसंधान के लिये तथा डॉ. रामकृष्णन को 2009 में कार्बनिक रसायन के क्षेत्र में रिबोसोम की संरचना एवं उसके महत्व संबंधी कार्य के लिये यह सम्मान प्राप्त हुआ।

आज भारत का नाम विज्ञान के क्षेत्र में अति प्रगतिशील देशों की श्रेणी में आता है। 1991 में ही भारत ने 'परम' सुपरकम्प्यूटर का निर्माण कर विश्व में अपनी धाक जमा ली । इस कम्प्यूटर ने उसे परमाणु अस्त्रों के निर्माण, अंतरिक्ष की शोध एवं मौसम की भविष्यवाणी के क्षेत्रों में एक शक्ति के रूप में स्थापित कर दिया। डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के कार्यों ने उसे अत्याधुनिक प्रक्षेपास्त्रों के निर्माण में सक्षम बना दिया। अब भारत अंतरिक्ष में निर्बाध विचरण कर सकता है। 2011 में उसके चंद्रयान प्रथम ने चंद्रमा पर जल की उपस्थिति सिद्ध कर समस्त विश्व से प्रशंसा अर्जित की। चंद्रयान द्वितीय जो चंद्रमा के धरातल पर उतर सकेगा, 2014 में प्रस्तावित है। भारत का एक अंतरिक्ष यान इस समय मंगल ग्रह की ओर यात्रा कर रहा है। और आशा है कि सितंबर 2014 में वह उसकी कक्षा में स्थापित हो जायेगा। दवा निर्माण के क्षेत्र में भी भारत विश्व की अग्रिम पंक्ति में आ चुका है। मानवता को शरीरिक कष्टों से मुक्ति दिलाने के लिये उसके वैज्ञानिक नई औषधियों की खोज में भी

प्रयासरत हैं। अभी कुछ समय पूर्व समाचार प्राप्त हुआ है कि भारतीय कंपनी रैनबक्सी ने मलेरिया की एक नई औषधि ''सिनरियम'' तथा कैडिला ने फेफड़ों के कैन्सर की नई औषधि ------ - का विरचन कर लिया है । शीघ्र ही ये दोनों विश्व के बाजारों में उपलब्ध हो जायेंगी। इसी प्रकार, कन्नूर विश्वविद्यालय में एक सर्वथा नई फफूंदीनाशक औषधि का अनुसंधान हो गया है तथा अन्यत्र कुछ अन्य वैज्ञानिकों ने काला अज़ार के लिये टीके (वैक्सीन) का निर्माण संभव बना दिया है । वैद्य श्री सुरेश शर्मा (अब दिवंगत) ने कदम्ब की पत्तियों से मधुमेह को जड़ से उखाड़ फेंकने में सक्षम औषधि का विरचना किया जिसे 2006 में अंतर्राष्ट्रीय पेटेंट भी प्राप्त हो चुका है। यद्यपि कुछ कारणों से अभी इसका व्यापारिक उत्पादन अटका हुआ है।

इस समय विज्ञान के क्षेत्र में भारत एक शक्ति के रूप में उभर चुका है। शोध, की मात्रा के हिसाब से वह विश्व के शीर्ष दस देशों में गिना जा रहा है। अंतरिक्ष वैज्ञानिक डा.यू. आर. राव को अमेरिका (वाशिंगटन)के 'हाल ऑफ फेम' में पिछले वर्ष स्थान प्रदान किया गया तथा TIFR के भौतिकशास्त्री प्रोफेसर शीराज़ नवल को इसी वर्ष में String theory तथा Quantum Field Theory में महत्वपूर्ण मौलिक अनुसंधान के लिये एक लाख डालर के पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 2014 में प्रोफेसर सी.एन. आर. राव को भारत सरकार ने भारत रत्न की उपाधि से विभूषित किया।

भविष्य में भारत अंतरिक्ष शोध एवं नवीन औषधियों के विरचन में निश्चित रूप से और अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त करेगा। अपेक्षित है कि वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रोतों एवं जल प्रबंधन के क्षेत्रों में भी भारतीय वैज्ञानिक और अधिक रुचि लें ताकि कल भारत पुन: विश्व गुरु के पद पर आसीन हो सके।❑

(पूर्व अध्यक्ष रसायन विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक एवं पूर्व अध्यक्ष - रसायन खंड, इंडियन साइंस कांग्रेस)

परिवर्तन तो लाना होगा

❑ **भरत शर्मा 'भारत'**

सत्य सनातन प्रति पल पावन, कितना हम करते अवगाहन।
कर्म जेठ सी भरी दुपहरी, मन की साध बरसता सावन।
पंथ एक अपनाना होगा, परिवर्तन तो लाना होगा।।
परिवर्तन तो लाना होगा.....

माना सोने सा अतीत था, कितने लोगों को प्रतीत था।
कालखण्ड में जिसकी आभा, मंद हुई ये शोक गीत था।
उस खोई आभा को फिर से, हम सब को उजलाना होगा।।
परिवर्तन तो लाना होगा.....

किसको फुर्सत कौन सुनेगा, हम बदले तो युग बदलेगा।
मानवतारूपी भट्टी में, तभी नया इन्सान ढलेगा।
कब तक बनकर जिन्दा लाशें, खुद को खुद दफ़नाना होगा।।
परिवर्तन तो लाना होगा.....

दसों दिशाएँ आज देश में, परिवर्तन की बात कह रही।
भोलीभाली बेबस जनता, दशकों से अन्याय सह रही।
वक़्त बदल दो तख़्त बदल दो, सोचो, नया ज़माना होगा।।
परिवर्तन तो लाना होगा.....

समरसता का भाव न समझे, उसे शांति का पाठ पढ़ाना।
यह तो लगता है वैसा ही, भैंसे आगे बीन बजाना।
बहुत हो चुका रुग्ण कीर्तन, राग भैरवी गाना होगा।।
परिवर्तन तो लाना होगा.....

शब्द समर्पित भाव समर्पित, प्रेम और सदभाव समर्पित।
परिवर्तन की इस बेला में, तन मन धन जीवन है अर्पित।
इस पावन 'भारत' भूमि हित, घर घर अलख जगाना होगा।।
परिवर्तन तो लाना होगा.....

काशी में संगोष्ठी सम्पन्न

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ काशी इकाई द्वारा सनातन धर्म इण्टर कॉलेज में 'सता एवं व्यवस्था परिवर्तन में शिक्षकों एवं बुद्धि जीवियों की भूमिका' विषय पर आयोजित संगोष्ठी में विषय प्रवर्तन करते हुए राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के प्रदेश अध्यक्ष डॉ. दीनानाथ सिंह ने कहा कि सत्ता परिवर्तन तो होने जा रहा है ऐसा वर्तमान परिदृश्य से संकेत मिल रहे हैं। परन्तु हमें आज व्यवस्था परिवर्तन पर विचार की जरूरत है। क्योंकि 1977 में भी सत्ता परिवर्तन तो हुआ था परन्तु व्यवस्था परिवर्तन नहीं हो पाया था जिसके कारण आज देश दुदर्शाग्रस्त है। आज आवश्यकता है शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तन कर दूरी मिटाने की।

मुख्य वक्ता पूर्व कुलपति सौराष्ट्र विश्वविद्यालय एवं वर्तमान कुलपति इण्डियन इन्स्टीच्यूट ऑफ टीचर एजूकेशन गुजरात के प्रो. कमलेश पी.जोशीपुरा ने कहा कि आज देश में एक अप्रत्याशित स्थिति आयी है जिसमें राष्ट्रीय सुरक्षा, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी आदि यह देश का एजेण्डा बन गया है। राष्ट्रवादी ताकतों के खिलाफ काम करने वाले सभी लोग आज एकजुट हो गये हैं। इसके खिलाफ लड़ने की जरूरत है। जन आकांक्षाओं की पूर्ति कैसे हो और इसके लिए संघर्ष का स्वरूप कैसा हो, सोचने की उसकी जरूरत है। संविधान में धर्म आधारित आरक्षण की कहीं भी व्यवस्था नहीं है। राष्ट्र विरोधी शक्तियाँ इसे संविधान में व्यवस्थित करने के प्रयास में है। इससे समाज को अवगत कराना है। लोकरंजक नीति का भी परित्याग करना होगा।

संगोष्ठी की अध्यक्षता करते हुए लाल बहादुर शास्त्री पी.जी. कॉलेज मुगलसराय (चन्दौसी) की प्राचार्या डॉ. श्रीमती पुष्पा सिंह ने कहा कि व्यवस्था में गुणात्मक परिवर्तन दलगत राजनीति से ऊपर उठकर इच्छा शक्ति रखकर किया जा सकता है। संगोष्ठी में अपने विचार व्यक्त करते हुए प्रो. प्रेमनारायण सिंह ने कहा कि आम आदमी ही सत्ता एव व्यवस्था में परिवर्तन करा सकता है। व्यक्तिगत स्तर पर अपने उद्देश्यों को पाने के लिए योजना बनायें। जमीनी हकीकत से लोगों को अवगत कराना। प्रारम्भ में डॉ. दीनानाथ पाण्डेय ने मंगलाचरण एवं डॉ. मागेश त्रिपाठी ने स्वागत गीत प्रस्तुत किया। धन्यवाद ज्ञापन सनाधन धर्म इन्टर कॉलेज के प्रधानाचार्य डॉ. हरेन्द्र कुमार राय ने किया। कार्यक्रम के संयोजक डॉ. जगदीश सिंह दीक्षित ने संगोष्ठी का संचालन किया। इस अवसर पर राजकोट (गुजरात) की पूर्व मेयर एवं प्रसिद्ध अधिवक्ता श्रीमती भावना भी उपस्थित रहीं।

कोटा में सम्पन्न नववर्ष पर मंगलोत्सव

राजकीय महाविद्यालय, कोटा में नव संवत्सर विक्रम सम्वत 2071 के उपलक्ष्य में दिनांक 31 मार्च 2014 को सायं में मंगलोत्सव का आयोजन हर्ष और उल्लास के साथ सम्पन्न किया गया। रुक्टा राष्ट्रीय के विभागीय अध्यक्ष डॉ. बी. के. योगी के अनुसार राजकीय महाविद्यालय कोटा के सौ वर्षों के इतिहास में यह प्रथम अवसर है, जब नव संवत्सर का दीप-यज्ञ और व्याख्यानों द्वारा स्वागत किया गया । इस अवसर पर श्री जी. डी. पटेल (मुख्य न्यासी, गायत्री शक्ति पीठ, कोटा) के सानिध्य में 551 दीपों का प्रज्ज्वलन कर दीप यज्ञ किया गया। मंगलोत्सव के मुख्य अतिथि डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल (पूर्व अध्यक्ष राज. मा. शि. बोर्ड, अजमेर, अध्यक्ष, अ.भा.रा.शैक्षिक महासंघ) एवं मुख्य वक्ता बाबा निरंजन नाथ जी अवधूत (संस्थापक-धाकड़ खेड़ी आश्रम, कोटा) ने अपने विचारों से अभिभूत और लाभान्वित किया।

प्रो. एस. सी. राजोरा एवं डॉ. हरि सिंह मीणा कार्यक्रम के विशिष्ठ अतिथि थे । कार्यक्रम में सभी उपस्थित सहभागियों ने एक दूसरे को भारतीय नव वर्ष की शुभकामनायें संप्रेषित की तथा नए वर्ष में देश एवं समाज के उत्थान और मंगल की कामना की। समारोह के अध्यक्ष एवं प्राचार्य डॉ टी.सी. लोया ने इस अनुपम आयोजन को वृहद् परीक्षा कार्य होने के बाद भी सफल रूप से सम्पादित करने के लिए रुक्टा (रा.) कार्यकारिणी और संकाय सदस्यों को साधुवाद दिया। रुक्टा (रा.) के स्थानीय इकाई के सचिव एवं कार्यक्रम संचालक डॉ सुब्रत शर्मा ने कार्यक्रम को सफल बनाने और सहभागिता करने के लिए सभी अतिथियों, संकाय सदस्यों और कर्मचारियों का आभार ज्ञापन किया। उपाचार्या डॉ. हेमलता लाहोटी के अनुसार इस कार्यक्रम में कोटा शहर के अनेक प्रबुद्ध-जन, शहर के विभिन्न महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों एवं शिक्षा संस्थानों के संकाय सदस्य उपस्थित रहे।

श्रीगंगानगर में आयोजित हुआ नववर्ष कार्यक्रम

राजकीय कन्या महाविद्यालय, श्रीगंगानगर में राजस्थान विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) के तत्वावधान में 'नववर्ष शुभेच्छा' कार्यक्रम का आयोजन 31 मार्च 2014 को सम्पन्न किया गया। जिसमें प्राचार्य डॉ. विजय लक्ष्मी महेन्द्रा ने मां सरस्वती की प्रतिमा के समक्ष दीप प्रज्ज्वलन कर कार्यक्रम का शुभारम्भ किया। डॉ. महेन्द्रा ने महाविद्यालय सहकर्मियों को नवसंवत्सर 2071 की शुभकामनाएं देते हुए कहा कि भारतीय नववर्ष कालगणना के अनुरूप पूर्णत: वैज्ञानिक है। डॉ. श्याम लाल, सचिव राजस्थान विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) श्रीगंगानगर विभाग ने नवसंवत्सर का महत्व बताते हुए कहा कि भारतीय संस्कृति की रक्षा व राष्ट्र की रक्षा हेतु ऐसे दिवस त्यौहार की तरह मनाये जाने चाहिए। उन्होंने कहा कि चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को ही ब्रह्माजी ने सृष्टि का निर्माण किया व भारतीय काल गणना आरम्भ हुई। उन्होंने अंग्रेजी कलेण्डर के आधार पर कालगणना की आलोचना करते हुए कहा कि अंग्रेजी वर्ष में कालगणना वैज्ञानिक नहीं है। जबकि भारतीय कालगणना तिथियों व गृहनक्षत्रों के आधार पर आधारित है जो कि सही है। इस अवसर पर उन्होंने सभी को भारतीय नववर्ष की शुभकामनाएं दी तथा एक कविता भी प्रस्तुत की। कार्यक्रम के अन्त में मिश्री व तुलसी के पत्तों से युक्त प्रसाद का वितरण किया गया।

बंगीय नव उन्मेष प्राथमिक शिक्षक संघ' का राज्य अधिवेशन सम्पन्न

'बंगीय नव उन्मेष प्राथमिक शिक्षक संघ' का एक विशेष राज्य अधिवेशन विगत 1 व 2 मार्च 2014 को पं. बंगाल के दक्षिण 24 परगना जिला में बक्रवाली नामक स्थान पर अवस्थित 'श्रमिक कल्याण परिषद' के सुसज्जित सभागार में सम्पन्न हुआ। आरम्भ में संगठन का झण्डोत्तोलन दक्षिण बंगाल के राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रान्त संघचालक मा. अतुल कुमार विश्वास ने किया। विद्या देवी मां सरस्वती के चित्र पर माल्यार्पण एवं वन्दना से अधिवेशन की कार्रवाई आरम्भ हुई।

संगठन पुरोधा श्री अजित विश्वास ने अपने उद्बोधन में शिक्षा व्यवस्था के वर्तमान अवमूल्यन के संदर्भ में अपनी प्राचीन शिक्षा पद्धति, विशेष कर गुरुकुल परम्परा के साथ आधुनिक शिक्षा पद्धति का सामञ्जस्य करने की आवश्यकता पर बल दिया।

उच्च शिक्षा के प्रभारी श्री महेन्द्र कुमार ने अपने भाषण में बंगाली की शिक्षा व्यवस्था की तुलना सर्व भारतीय स्तर के साथ करते हुए कहा कि बंगाल में अभी प्रचलित शिक्षा व्यवस्था यदि आगे भी चलती रही तो संघ की पीढ़ियां सर्व भारतीय स्तर पर प्रतियोगिता में पिछड़ी रह जायेगी। एबीआरएसएम ही भारत का एकमात्र सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रवादी शिक्षक संगठन है। इसमें के.जी. से पी.जी. तक शिक्षक शिक्षिकाओं का योगदान है।

शिक्षाविद् अनिमेष डे ने अपने भाषण में कहा कि अंग्रेजों ने हमें अंग्रेजी शिक्षा से तो शिक्षित कर दिया, किन्तु इससे हम भारतीय नहीं बन पाये।जॉन मैकाले की शिक्षा पद्धति ने हम कोट पैन्ट पहने हुए भारतीयों को मानसिक रूप से अंग्रेजियत में ढाल दिया। यद्यपि उच्च शिक्षा के लिये अंग्रेजी की आवश्यकता है, किन्तु भारतीय पारम्परिक शिक्षा का, विशेष कर संस्कृत भाषा का, वर्जन कर हमने देश के सनातन विश्वास को तोड़ दिया है।

शैक्षिक महासंघ के क्षेत्र प्रमुख श्री स्वपन समद्दर ने कहा कि इस राज्य में शिक्षा में भ्रष्टाचार हो रहा है। राजनैतिक पक्षपात से ग्रस्त प्रशासन साधारण शिक्षकों को परेशान कर रहा है। मुख्य सचिव दिनेश साहा ने कहा कि विगत 34 वर्षों में वामदलों ने जिस प्रकार शिक्षा व्यवस्था को पद दलित करके अगणतान्त्रिक तरीके से शिक्षा से नैतिकता का विसर्जन करके दलीय शासन चलाया था, उसी प्रकार वर्तमान में ममता सरकार भी नियोग से लेकर स्थानान्तरण के विषय में लाखों रूपयों के भ्रष्टाचार में लिप्त है। इसके विरुद्ध हमें सबसे पहले संगठन को मजबूत बनाना होगा। सभापति सोमेन दास ने भी भारतीय शिक्षा व्यवस्था को लागू करने की आवश्यकता पर बल दिया।

भरतपुर में नववर्ष पर संगोष्ठी

राजस्थान विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) की भरतपुर इकाई द्वारा स्थानीय एम.एस.जे. महाविद्यालय में एक व्याख्यान का आयोजन किया गया जिसमें रुक्टा 'राष्ट्रीय' के प्रदेश संगठन मंत्री मुख्य वक्ता डॉ. ग्यारसीलाल जाट ने भारतीय कालगणना को सर्वाधिक पुरातन, श्रेष्ठ एवं पूर्णत: वैज्ञानिक बताया उन्होंने कहा कि विक्रम संवत में नववर्ष की शुरुआत चन्द्रमास के चैत्र माह के उस दिन से होती है जिस दिन ब्रह्म पुराण के अनुसार ब्रह्मा जी ने सृष्टी की रचना का प्रारम्भ किया था। इसी दिन से सतयुग की शुरुआत भी मानी जाती है। इसी दिन भगवान विष्णु ने मत्स्य अवतार लिया था। इसी दिन से नवरात्र की शुरुआत होती है और इसी दिन भगवान राम का राज्याभिषेक हुआ था। आधुनिक काल में आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती के द्वारा आर्य समाज की स्थापना तथा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक प.पू.डॉ.केशव बलिराम हेडगेवार जी का जन्म 1889 में इसी पावन दिन को हुआ था।

मुख्यवक्ता ने कहा कि भारतीय नववर्ष की प्रामाणिकता पर प्रकृति भी अपनी स्वीकृति प्रदान करती प्रतीत होती है क्योंकि इसी समय किसानों के घर नया अन्न आता है, वृक्षों में नये पत्ते आने लगते है और यहाँ तक कि पशुपक्षी भी अपना स्वरुप नये प्रकार से परिवर्तित कर लेते हैं। इसी क्रम में उन्होंने कहा कि आज के पावन दिन से हमें संकल्प लेना चाहिए कि हम सदैव सकारात्मक सोच के साथ अपने कर्त्तव्यों का निर्वाहन करें। कार्यक्रम की प्रस्तावना रखते हुए डॉ.प्रमोद कुमार शर्मा ने कहा कि राष्ट्र की पहचान में कालगणना भी एक प्रमुख बिन्दु होता है।मुख्य अतिथि प्रो.उमेश चन्द चतुर्वेदी ने अपने उद्बोधन में कहा कि भारतीय नववर्ष कभी भी अप्रासंगिक नहीं हो सकता इसकी प्रासंगिकता सदैव बनी रहेगी। कार्यक्रम के विशिष्ठ अतिथि डॉ.अशोक कुमार अग्रवाल एवं अध्यक्ष डॉ. उमेश चन्द शर्मा ने भी भारतीय नववर्ष पर अपने विचार व्यक्त किये। कार्यक्रम का प्रारम्भ अतिथियों द्वारा माँ सरस्वती के चित्र पर माल्यार्पण से हुआ। कार्यक्रम का संचालन डॉ.रमानन्द कुलदीप एवं आभार प्रदर्शन डॉ.सुनील कुमार गुप्ता ने किया।

राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर में नववर्ष पर आयोजित विचार गोष्ठी

बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर में दिनांक 31 मार्च 2014 को वर्ष प्रतिपदा उत्सव, रुक्टा (राष्ट्रीय) इकाई की तरफ से मनाया गया। सभी प्राध्यापकों एवं कर्मचारियों को तिलक लगाकर एवं मिष्ठान वितरण कर नवसंवत्सर 2071 मनाया गया।

इस अवसर पर महाविद्यालय में एक विचार गोष्ठी का आयोजन भी किया गया। इस शैक्षिक विचार गोष्ठी में 'नवसंवत्सर की वैज्ञानिकता एवं उसके महत्त्व' पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के राजस्थान क्षेत्र के बौद्धिक प्रमुख माननीय कैलाशचन्द्र जी ने मुख्यवक्ता एवं मुख्य अतिथि के रूप में ज्ञानवर्द्धक उद्बोधन प्रदान किया। अध्यक्षता प्राचार्य डॉ. यशोदा मीणा ने की। उपाचार्य द्वय डॉ. पूरण सिंह चौधरी एवं डॉ. रमेश चन्द्र खण्डूरी, अलवर विभाग प्रचारक श्री मुरली मनोहर एवं रूक्टा राष्ट्रीय के प्रान्तीय संयुक्त मंत्री डॉ. गंगाश्याम गुर्जर उपस्थिति प्रदान कर कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई। 50 से भी अधिक प्राध्यापक इस कार्यक्रम में शामिल हुए। विद्यार्थियों की उपस्थिति भी काफी अच्छी रही।